ISSN 2319-3107

आंचलिक पत्रकार

422

सितंबर, 1981 से प्रकाशित

15 जून 2017

मूल्य ₹ 25/-

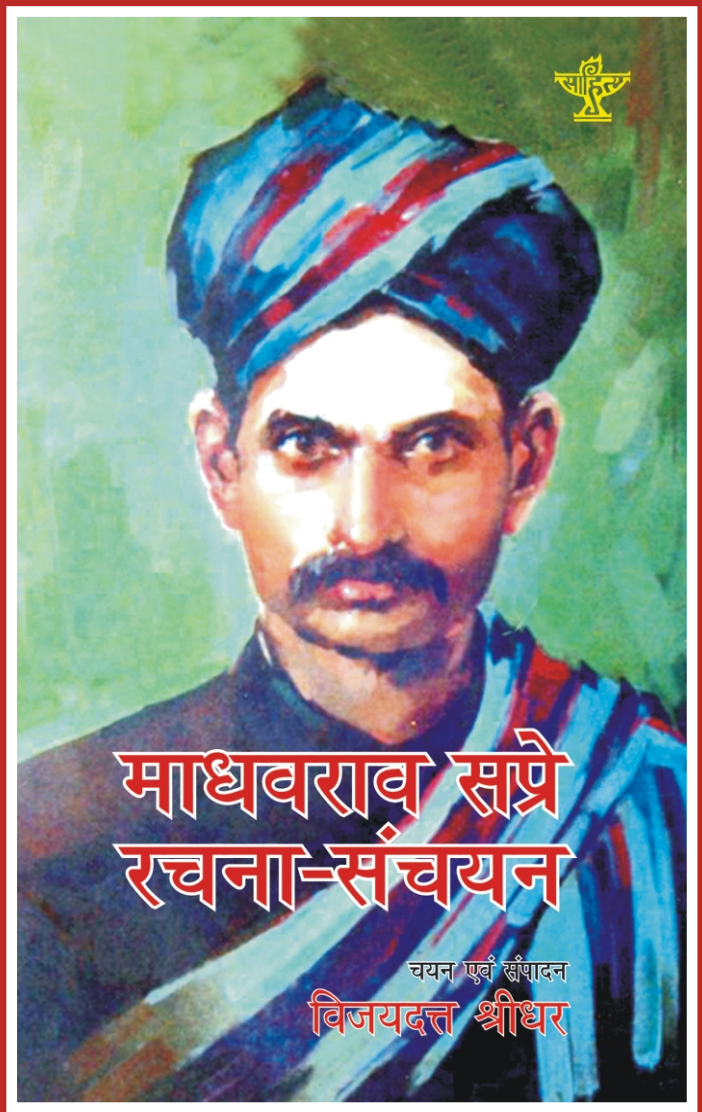

कर्मयोगी
पं. माधवराव सप्रे

"माधवराव सप्रे भारतीय नवजागरण के पुरोधा संपादक, साहित्यकार रहे हैं। प्रखर संपादक के रूप में उनकी भूमिका लोक प्रहरी की रही है और सुधी साहित्यकार के रूप में लोक शिक्षक की। कोशकार और अनुवादक के रूप में उन्होंने हिन्दी भाषा को समृद्ध किया है। सप्रे जी के निबंधों में सामाजिक, राजनीतिक, शैक्षिक और आर्थिक विषयों के समावेश के साथ ही सुबोधता, सुगमता और शैली में निष्कपट हार्दिकता होती थी। सप्रे जी ने आजीवन हिन्दी भाषा की सेवा और साधना की। सप्रे जी राष्ट्रभाषा की महत्ता और राष्ट्रजीवन में भाषा के महत्त्व को समझते थे और उसके हित में जीवनपर्यन्त सक्रिय रहे।"

सप्रे संग्रहालय
सा विद्या या विमुक्तये

जनसंचार माध्यमों और विज्ञान संचार की शोध पत्रिका

आर.एन.आई.पं.क्र. MP HIN/2004/12178, डाक पंजीयन क्र. म.प्र. भोपाल/162/2015-17

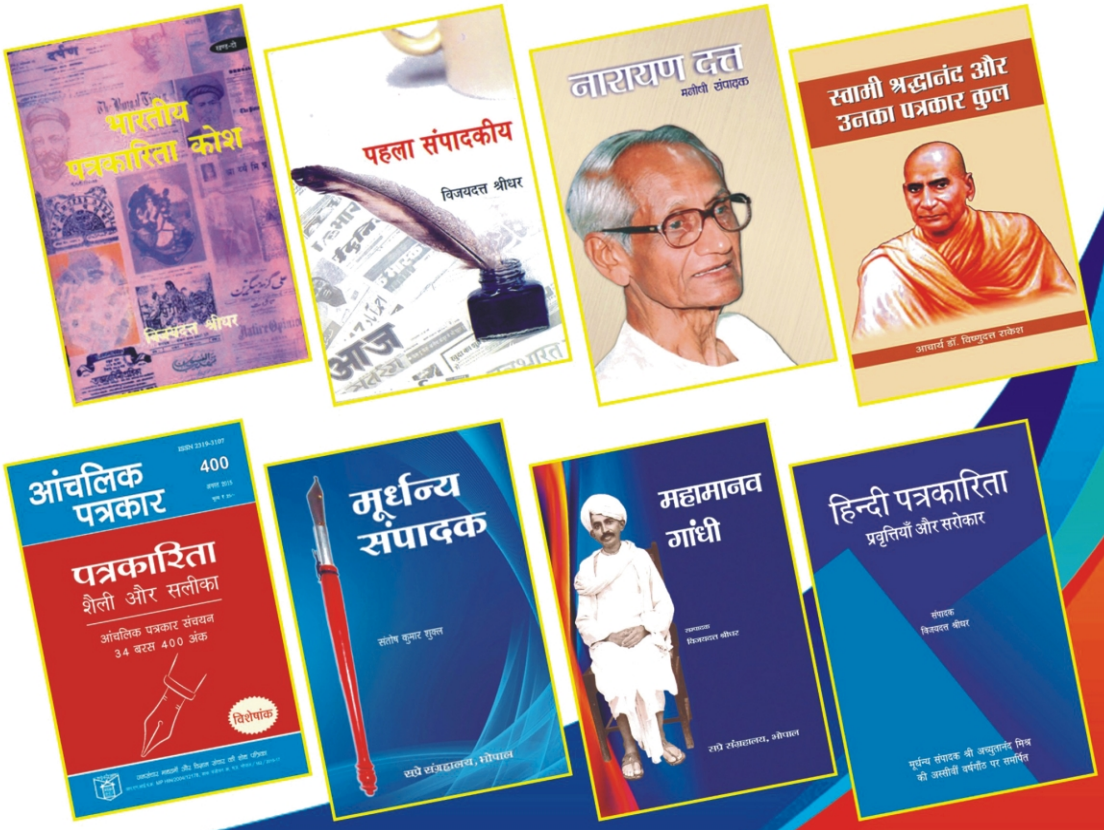

सप्रे संग्रहालय के शोध एवं प्रकाशन

संपादकीय टिप्पणियाँ, पुरोधा संपादकों के पत्रकारिता विषयक व्याख्यानों और आलेखों का समावेश तथा भारत में सभी भाषाओं के समाचारपत्रों और पत्रिकाओं का प्रामाणिक वृत्तांत लिपिबद्ध करने के साथ-साथ भारतीय नवजागरण आंदोलन की सभी गतिविधियों का यथा प्रसंग उल्लेख इन ग्रंथों में हुआ है।

प्रशासनिक अधिकारी
सप्रे संग्रहालय
मेन रोड नं. 3, भोपाल - 462003
दूरभाष - (0755) 2763406, 4272590
Email - sapresangrahalaya@yahoo.com
editor.anchalikpatrakar@gmail.com
Website - www.sapresangrahalaya.com

ISSN 2319–3107

आंचलिक पत्रकार

जनसंचार माध्यमों और विज्ञान संचार की शोध पत्रिका

अनुक्रम

4. कर्मयोगी पं. माधवराव सप्रे
विजयदत्त श्रीधर

16. एस.कस्तूरीरंगा अय्यंगार
संतोष कुमार शुक्ल

22. पूर्व–भारत की हिन्दी पत्रकारिता
डा. कृपाशंकर चौबे

34. पश्चिम–भारत की हिन्दी पत्रकारिता
प्रकाश दुबे

39. भारत में प्रेस की आजादी सिकुड़ रही है
राकेश दुबे

43. सप्रे संग्रहालय में अलंकरण समारोह

लेखकों से अनुरोध

● लेख ईमेल पर ही भेजिए। हाथ की लिखी या स्केन की हुई कापी न भेजें। ● लेख अधिकतम 1000 शब्दों तक का हो। बड़े लेख न भेजें। ● छोटे-छोटे वाक्य लिखें। ● माइक्रो साफ्ट वर्ड में कृतिदेव 010 फोंट का प्रयोग करें। ● पत्रकारिता, जनसंचार और विज्ञान संचार के अलावा अन्य कोई सामग्री इस पत्रिका में नहीं छपती। ● तथ्य और आँकड़े जाँचने के बाद ही लेख भेजिए। ● लेखन-मानदेय का प्रावधान है।

प्रकाशित लेखों पर प्रबुद्ध पाठकों की प्रतिक्रियाओं का स्वागत है। इसी से विमर्श आगे बढ़ेगा।

सितंबर, 1981 से प्रकाशित

जून – 2017

वर्ष–36, अंक–10, पूर्णांक–422

एक प्रति – ₹ 25/– वार्षिक – ₹ 250/–

संपादक मंडल

डा. शिवकुमार अवस्थी
श्री अशोक मानोरिया
डा. मंगला अनुजा
डा. राकेश पाठक

.....

संपादक

विजयदत्त श्रीधर

.....

प्रकाशक

माधवराव सप्रे स्मृति समाचार पत्र संग्रहालय एवं शोध संस्थान
माधवराव सप्रे मार्ग (मेन रोड नं. 3)
भोपाल (म.प्र.) 462 003

.....

मुद्रक

दृष्टि आफसेट, प्रेस काम्पलेक्स
महाराणा प्रताप नगर, जोन–I
भोपाल (म.प्र.) – 462 011

.....

संपर्क

फोन – (0755) 2763406
(0755) 4272590
(0755) 2552868

.....

E-mail

editor.anchalikpatrakar@gmail.com
sapresangrahalaya@yahoo.com

प्रणाम

कर्मयोगी पं. माधवराव सप्रे

■ **विजयदत्त श्रीधर**

कर्मयोगी पण्डित माधवराव सप्रे भारतीय नव जागरण के पुरोधा सम्पादक-साहित्यकार हैं। लोकमान्य बाल गंगाधर तिलक के ओज और तेज का हिन्दी जगत में संचार करने का महत् कार्य सप्रे जी ने किया। प्रखर सम्पादक के रूप में उनकी भूमिका लोक प्रहरी की है और सुधी साहित्यकार के रूप में लोक शिक्षक की है। कोशकार और अनुवादक के रूप में उन्होंने हिन्दी भाषा को समृद्ध किया है। पण्डित माधवराव सप्रे का एक महत्वपूर्ण अवदान ऐसी प्रतिभाओं की परख और उनका प्रोन्नयन है जिन्हें वे राष्ट्रीय कार्य के लिए उपयुक्त पाते थे। उन्होंने स्वतंत्रता संग्राम के लिए राजनीतिक कार्यकर्ता, हिन्दी की सेवा और साधना के लिए सुधी साहित्यकार तथा जन जागरण के लिए मुखर और प्रखर पत्रकार तैयार किए। कवि-चिंतक-संपादक पं. माखनलाल चतुर्वेदी, कवि-संपादक-इतिहासविद् पण्डित द्वारका प्रसाद मिश्र, नाटककार - हिन्दी सेवी सेठ गोविन्द दास, सुधी सम्पादक लक्ष्मीधर वाजपेयी तथा साहित्यकार-पत्रकार मावली प्रसाद श्रीवास्तव जैसी विभूतियों का लोक व्यक्तित्व सप्रेजी की ही निर्मितियाँ हैं।

भरतपुर हिन्दी सम्पादक सम्मेलन (1927) के अध्यक्षीय उद्‌बोधन में कर्मवीर संपादक श्री माखनलाल चतुर्वेदी ने सटीक मूल्यांकन किया है - ''आज के हिन्दी भाषा के युग को पण्डित महावीर प्रसाद जी द्विवेदी द्वारा निर्मित तथा तेज को पण्डित माधवराव जी सप्रे द्वारा निर्मित कहना चाहिए। यह सेवाएँ सब सज्जनों की हैं किन्तु सम्पादकीय

जन्म : 19 जून 1871, पथरिया (दमोह)
निधन : 23 अप्रैल 1926, रायपुर

व्यवस्था, विचार प्रवाह और भाषाशैली के रूप में वर्तमान युग को द्विवेदी जी और सप्रे जी का ही युग कहना होगा।''

पण्डित माधवराव सप्रे निम्न-मध्यम वर्गीय परिवार के सदस्य थे। परिस्थितियों से संघर्ष करते हुए उन्होंने बी.ए. तक शिक्षा प्राप्त की। कानून की पढ़ाई बीच में ही छोड़ दी। परिवार के भरण-पोषण के लिए नौकरी करना उनकी आवश्यकता थी। दो बार उन्हें अच्छे पदों के प्रस्ताव मिले भी, परन्तु सप्रेजी को फिरंगी सरकार की नौकरी स्वीकार नहीं

थी। पेण्ड्रा के राजकुमार का शिक्षक बनना उन्हें उचित लगा। वेतन 50 रुपये मासिक था। जब उनके पास कुछ धनराशि इकट्ठी हो गई तब पण्डित माधवराव सप्रे ने अपनी रुचि और रुझान के कर्म-क्षेत्र में प्रवेश किया। जनवरी 1900 में पेण्ड्रा से मासिक पत्र 'छत्तीसगढ़ मित्र' का सम्पादन-प्रकाशन किया। वामन बलीराम लाखे और रामराव चिंचोलकर उनके सहयोगी थे।

'छत्तीसगढ़ मित्र' के प्रवेशांक में 'आत्म परिचय' शीर्षक से सप्रे जी ने अपने मंतव्य और उद्देश्य की घोषणा की - (एक) इसमें कुछ सन्देह नहीं कि सुसम्पादित पत्रों के द्वारा हिन्दी भाषा की उन्नति हुई है। अतएव यहाँ भी 'छत्तीसगढ़ मित्र' हिन्दी भाषा की उन्नति करने में विशेष प्रकार से ध्यान देवे। आजकल भाषा में बहुत सा कूड़ा कर्कट जमा हो रहा है, वह न होने पावे इसलिए प्रकाशित ग्रन्थों पर प्रसिद्ध मार्मिक विद्वानों के द्वारा समालोचना भी करे। (दो) अन्यान्य भाषाओं के ग्रन्थों का अनुवाद कर सर्वोपयोगी विषयों का संग्रह करना आवश्यक है। इस हेतु से पदार्थ विज्ञान, रसायन, गणित, अर्थशास्त्र, मानसिक शास्त्र, नीति शास्त्र, आरोग्य शास्त्र इत्याद्यनेक शास्त्रीय विषय और प्रसिद्ध स्त्री-पुरुषों के जीवन चरित्र, मनोरंजक कथानक, आख्यान, आबाल वृद्ध स्त्री-पुरुषों के पढ़ने योग्य हितावह उपन्यास आदि लाभदायक विषय आंग्ल, महाराष्ट्र, गुर्जर, बङ्गदेशीय तथा संस्कृत आदि ग्रन्थों का अनुवाद करके हिन्दी के प्रेमियों को अर्पण करने का हमारा विचार है। (तीन) छत्तीसगढ़ के गरीब विद्यार्थियों को उच्च प्रकार की शिक्षा मिले और इस विभाग में विद्या का प्रसार होकर उद्योग की बृद्धि होवे, एतन्निमित्त 'छत्तीसगढ़ मित्र' के छपाई वगैरह का खर्च निकाल कर जो कुछ प्राप्ति बचेगी उसमें से स्कालरशिप देने का प्रबन्ध किया जाएगा।'' उपर्युक्त उद्देश्यों से स्पष्ट होता है कि सप्रेजी ने किन महान लक्ष्यों के लिए अपना जीवन समर्पित किया था।

सप्रे संग्रहालय भोपाल

॥ श्रीपरमात्मनेनमः ॥

वर्ष १रा. छत्तीसगढमित्र. अंङ्क ३रा.

॥ श्लोक ॥

पापान्निवारयति योजयते हिताय । गुह्यानि गूहति गुणान् प्रकटीकरोति ॥
आपद्गतं च न जहाति ददाति काले । सन्मित्रलक्षणमिदं प्रवदन्ति सन्तः ॥१

श्रीमती रानी भवानी.*

(लेखक—"छत्तीसगढ़ निवासी एक मित्र"—)

इतिहास के पढ़नेवाले जानते हैं कि बंगाले में मुसलमानों का राज्य कई दिनों तक रहा। उस समय वहा अनेक एतद्देशीय राजा और ज़मीन्दार भी थे जो अपनी २ रियासत के स्वतंत्र मालिक थे। वे सब बड़े शूर और बलवान थे। उनके पास फ़ौज भी बहुतसी रहा करती थी। वे नाम मात्रको दिल्ली के बादशाह को अपना सार्वभौम राजा मानते थे और इसी लिये वे उसके नव्वाब को कर दिया करते थे। बादशाह ने बंगाल प्रान्त के लिये जो एक नव्वाब भेजा था वह मुर्शिदाबाद में रहता था। अप्रत्यक्ष [illegible] से वही वहां का मालिक था। उसी के बल और चतुराई पर उस [illegible]देश में बादशाह की अमलदारी क़ायम रहने का सम्भव था। परंतु उस[illegible] भी सदैव इस बातका डर बना रहता था कि न जानें किस दिन ये राजा और ज़मीदार बिलकुल स्वतंत्र हो जायगे॥

अठारहवीं सदी के अन्तिम भाग में मुसलमानों की रति घटने लगी; यहांतक कि अन्तमें दिल्ली के बादशाहों का अधिकार केवल उनके शाही तख्त और महल के सिवाय अन्यत्र कहीं भी न रह गया। जो उनके सरदार और नव्वाब थे वे सब खुद मुख़्त्यार हो गये और जिन्हें जहां बना वहीं अपना २ अधिकार जमाने लगे। बंगाले का नव्वाब भी इसी तरह स्वतंत्र हो गया। परंतु थोड़े ही दिनों में उसके प्रांतके छोटे २ राजाओं और

*यह लेख Heroines of Ind और 'महाराष्ट्र कोकिल' के आधार पर लिखा गया है।

'भारत मित्र' ने 11 जून, 1900 के अंक में सम्मति लिखी - ''इस पत्र के सम्पादक एक महाराष्ट्र हैं तथापि हिन्दी बहुत शुद्ध लिखते हैं। लेख भी बहुत अच्छे होते हैं।'' वास्तव में पण्डित माधवराव सप्रे उस ज्योतिर्मयी आकाशगंगा के दैदीप्यमान नक्षत्र हैं जिसमें बाबूराव विष्णु पराडकर, लक्ष्मण नारायण गद्रे, अमृतलाल चक्रवर्ती, सिद्धनाथ माधव आगरकर प्रभृति विद्वज्जन सितारों की भाँति चमके। इन हिन्दीतर कलमकारों की यशस्वी सेवाओं की हिन्दी बड़ी ऋणी है। ऐसा ऋण जिसे उठाए रखने में हमारा गौरव है।

'छत्तीसगढ़ मित्र' तीन वर्ष ही जीवित रह सका। तथापि हिन्दी पत्रकारिता को संस्कारित करने में सप्रे जी की आधारभूत भूमिका चिरस्मरणीय है। 'छत्तीसगढ़ मित्र' का सम्पादन करते समय सप्रे जी ने अनुभव किया कि जब तक हिन्दी में तेजस्वी-ओजस्वी साहित्य की रचना नहीं

होगी और उसका प्रसार नहीं होगा तब तक जन जागरण नहीं होगा। देश प्रेम का भाव प्रबल नहीं होगा। देशोत्थान के लिए जन चेतना का ज्वार नहीं उमड़ेगा। सन 1905 में नागपुर को उन्होंने कार्यक्षेत्र बनाया। हिन्दी ग्रन्थ प्रकाशन मण्डली की स्थापना की। सन 1906 में मासिक 'हिन्दी ग्रन्थ माला' का प्रकाशन आरम्भ किया। पहले ही वर्ष आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी के ग्रन्थ 'स्वाधीनता' और 'शिक्षा' का प्रकाशन यहाँ से किया गया।

सन 1906 में डा. वासुदेवराव लिमये के आग्रह पर पण्डित माधवराव सप्रे ने 'स्वदेशी आन्दोलन और बायकाट अर्थात भारत की उन्नति का एकमात्र उपाय' शीर्षक लम्बा निबन्ध लिखा। लोकमान्य बाल गंगाधर तिलक के 'केसरी' में स्वदेशी आन्दोलन के सम्बन्ध में प्रकाशित लेखमाला के आधार पर इसे लिखा गया था। इसमें अनुवाद, भावानुवाद और मौलिक लेखन - तीनों का सहारा लिया गया। इस लेख का हिन्दी पाठकों पर गहरा असर हुआ। डा. लिमये ने इसे देशसेवक प्रेस से पुस्तकाकार छपवाया। इसकी 8000 प्रतियाँ छपीं जो उस समय की दृष्टि से उल्लेखनीय आँकड़ा है। पुस्तक में ही प्रकाशक ने इसी पुस्तक की विषय वस्तु के आधार पर विद्यार्थियों के लिए निबंध प्रतियोगिता की घोषणा की। इस आयोजना ने हिन्दी क्षेत्र में जन जागरण का विस्तार किया। यहीं से सप्रे जी फिरंगी हुकूमत की आँख की किरकिरी बनने लगे।

13 अप्रैल 1907 को पण्डित माधवराव सप्रे ने नागपुर से साप्ताहिक 'हिन्दी केसरी' का सम्पादन-प्रकाशन आरम्भ किया। सप्रे जी, तिलक महाराज की विचार धारा के अनुयायी थे। वे मराठी साप्ताहिक 'केसरी' के नियमित पाठक थे। हिन्दी पाठकों के लिए देशभक्ति से ओतप्रोत ऐसे ही ओजस्वी पत्र की आवश्यकता उन्हें प्रतीत हो रही थी। 'हिन्दी केसरी' का प्रकाशन इसी आवश्यकता की पूर्ति का निर्भीक और गंभीर उपक्रम था। 'हिन्दी केसरी' में काला पानी, देश का दुर्देव, बाम्ब गोले का रहस्य जैसे लेखों का प्रकाशन हुआ। सम्पादकीय टिप्पणियाँ भी सरकार के दमन चक्र पर प्रहार करने वाली होती थीं। अन्ततः सप्रे जी को राजद्रोह के आरोप में भारतीय दण्ड संहिता की धारा 124 (अ) के तहत गिरफ्तार कर लिया गया। सप्रे जी के अनन्य सहयोगी पं. लक्ष्मीधर वाजपेयी ने 'हिन्दी केसरी' का सम्पादन-प्रकाशन जारी रखा। परन्तु सन 1908 का अंत आते-आते केसरी और ग्रन्थमाला - दोनों का भी अन्त हो गया।

हिरासत में सप्रे जी का स्वास्थ्य खराब रहने लगा। उनके मँझले भाई बाबूराव की तबीयत भी ठीक नहीं रहती थी जिनके ऊपर पूरे परिवार के भरण-पोषण का दायित्व था। वे सरकारी नौकरी में थे। घर की दशा बहुत खराब थी। सप्रे जी के कुछ मित्रों ने उनके भाई बाबूराव के दबाव में माफीनामा लिख कर रिहा होने का प्रस्ताव रखा। यह सप्रे जी को स्वीकार नहीं था। परन्तु बाबूराव की आत्महत्या की धमकी के कारण सप्रे जी को माफीनामे पर हस्ताक्षर करने के लिए विवश होना पड़ा। यद्यपि वे जानते थे कि उनके सार्वजनिक जीवन का सत्यानाश हो जाएगा। सप्रे जी के परिवार को तो उनकी रिहाई से राहत मिल गई, लेकिन वे स्वयं को माफ नहीं कर पाए। उन्होंने कठोर प्रायश्चित किया। शान्ति और भावी मार्ग की तलाश में वे वर्धा के निकट हनुमानगढ़ में गुरुवर पं. श्रीधर विष्णु पराँजपे के आश्रम में गए। गुरु-आज्ञा से सप्रे जी ने तेरह माह एकान्तवास में बिताए। मधुकरी वृत्ति अपनाई। पगड़ी, जूते-चप्पल तक का परित्याग कर दिया। मन की पवित्रता के लिए साधु का जीवन व्यतीत किया। कालान्तर में वे रायपुर लौटे और रामदासीमठ की स्थापना की। आध्यात्मिक अध्यवसाय और भजन-प्रवचन करके समय बिताने लगे। गुरुवर पं. श्रीधर विष्णु पराँजपे के परामर्श से सप्रे जी ने श्रीसमर्थ स्वामी रामदास कृत 'दासबोध' ग्रन्थ का

गहन पारायण किया। सन 1910 में उन्होंने दासबोध का हिन्दी में अनुवाद किया, जो सन 1913 में प्रकाशित हुआ। उन्हें लोकमान्य बाल गंगाधर तिलक कृत 'गीता रहस्य' के अनुवाद का दायित्व सौंपा गया। सन 1915 में उन्होंने 'श्रीमद्भगवद्गीता रहस्य अथवा कर्मयोगशास्त्र' का अनुवाद-कार्य पूरा कर लिया। इसका प्रकाशन सन 1916 में हुआ। 'गीता रहस्य' के 24 संस्करण अभी तक प्रकाशित हो चुके हैं जो सप्रे जी के श्रेष्ठ अनुवाद कर्म की लोकप्रियता का प्रमाण हैं।

लगभग आठ वर्षों के एकांतवास के पश्चात पण्डित माधवराव सप्रे, नवंबर 1916 में, हिन्दी साहित्य सम्मेलन के जबलपुर अधिवेशन में सार्वजनिक रूप से सामने आए। उन्होंने एक प्रस्ताव भी रखा - ''भारत वर्ष में शिक्षा प्रसार और विद्या की उन्नति के लिए आवश्यक है कि शिक्षा का माध्यम देशी भाषा हो।'' इसी सम्मेलन में सेठ गोविन्ददास का परिचय सप्रे जी से हुआ। वे जीवन पर्यन्त सप्रे जी के शिष्यवत् रहे। सन 1919 में हिन्दी साहित्य सम्मेलन के पटना अधिवेशन में सप्रे जी ने एक महत्वपूर्ण प्रस्ताव का समर्थन किया। यह प्रस्ताव था - ''इस सम्मेलन की सम्मति में इस बात की अत्यन्त आवश्यकता है कि राष्ट्रभाषा हिन्दी के साहित्य की सर्वांगीण उन्नति के लिए देश में कम से कम एक ऐसी संस्था स्थापित की जाय जहाँ लेखकगण आजीवन साहित्य सेवा के लिए रखे जावें जिनके द्वारा साहित्य के भिन्न भिन्न अंगों पर उत्तमोत्तम ग्रन्थ निर्माण किए जावें।'' इस प्रस्ताव की तत्काल प्रतिक्रिया हुई और सेठ गोविन्ददास ने जबलपुर में अपना शारदा भवन 'राष्ट्रीय हिन्दी मंदिर' बनाने के लिए समर्पित कर दिया और कार्यारम्भ करने के लिए 2500 रुपये देने की घोषणा की। मंदिर के संचालन का दायित्व सप्रे जी को सौंपा गया। मासिक पत्रिका 'श्रीशारदा' का प्रकाशन इसी संस्था से मार्च 1920 में आरंभ हुआ। श्री नर्मदाप्रसाद मिश्र पत्रिका के आद्य संपादक हुए, पश्चात पं. द्वारका प्रसाद मिश्र ने यह दायित्व निभाया।

पं. विष्णुदत्त शुक्ल की पहल पर जब जबलपुर से स्वातंत्र्य चेतना की वाणी बनने के लिए 'कर्मवीर' साप्ताहिक के प्रकाशन की योजना बनी तब सप्रे जी ने उसका पुरजोर साथ दिया। एकान्तवास में ही उन्होंने किन्हीं भी अनुष्ठानों में नाम नहीं देने का संकल्प ले लिया था, इसलिए वे 'कर्मवीर' का संपादक बनने के लिए राजी नहीं हुए। उन्हीं की सलाह पर पं. माखनलाल चतुर्वेदी को कर्मवीर का सम्पादक बनाया गया। यहाँ यह उल्लेख भी उचित होगा कि सप्रे जी की प्रेरणा से माखनलाल जी ने सरकारी अध्यापकी त्याग कर 'प्रभा' का सम्पादन-दायित्व सन 1913 में ग्रहण किया था। कालान्तर में माखनलाल जी हिन्दी के उच्चकोटि के कवि, श्रेष्ठ संपादक, प्रखर चिन्तक, अप्रतिम वक्ता और स्वतंत्रता सेनानी के रूप में प्रतिष्ठित हुए। कोई गुरु अपने शिष्य से इससे ज्यादा आशा और अपेक्षा क्या कर सकता है? सन 1922 में 'कर्मवीर' का प्रकाशन बन्द हो गया। माखनलाल जी जेल से छूटे तो 'प्रताप' का सम्पादन दायित्व सँभालने के लिए कानपुर जाना पड़ा, क्योंकि तब श्री गणेश शंकर विद्यार्थी जेल चले गए थे। सप्रे जी और विद्यार्थी जी के आग्रह पर 4 अप्रैल 1925 को खण्डवा से 'कर्मवीर' का पुनः प्रकाशन हुआ। पहले इस पर पं. विष्णुदत्त शुक्ल की स्मृति लिखा होता था, अप्रैल 1926 के बाद 'पं. विष्णुदत्त शुक्ल और पं. माधवराव सप्रे

की स्मृति' छपने लगा।

निबंध

हिन्दी साहित्य के विद्वानों ने पण्डित माधवराव सप्रे को उच्चकोटि का निबंधकार माना है। आचार्य रामेश्वर शुक्ल 'अंचल' के अनुसार सप्रे जी के निबंधों में सामाजिक और राजनीतिक विषयों के समावेश के साथ ही सुबोधता, सुगमता और शैली में निष्कपट हार्दिकता होती थी। सरस्वती, प्रभा, अभ्युदय, विद्यार्थी, मर्यादा, श्री शारदा, ज्ञानशक्ति में उनके अनेक निबंध प्रकाशित हुए। वे जिस विषय पर लिखते थे उसका मनन करते थे और पाठकों के लिए उपयोगी बनाने पर ध्यान देते थे। भाषा और शैली ऐसी होती थी कि सामान्य पाठक भी विषय को ठीक से समझ सकें। हिन्दी, अँगरेजी, मराठी और संस्कृत भाषाओं का उनका अध्ययन गहरा था। इसीलिए वे अपनी बात को पुरअसर बनाने के लिए इन भाषाओं के ग्रन्थों के उद्धरण देते थे। श्लोक और मुहावरों से लेख को परिपुष्ट किया करते थे। उनका संदर्भ पुस्तकालय बहुत समृद्ध रहा होगा, तभी उनका लेखन सर्वोत्कृष्ट हुआ करता था। सकल ज्ञान की कालजयी पत्रिका 'सरस्वती' और सम्पादन-कला के आचार्य पण्डित महावीर प्रसाद द्विवेदी के वे समादृत लेखक थे। 'सरस्वती' के हीरक जयन्ती विशेषांक में सन 1900 से 1959 तक साठ वर्षों की सर्वोत्कृष्ट रचनाएँ सँजोयी गई हैं। इनमें 108 कवियों, 60 कहानीकारों और 100 लेखकों की रचनाएँ शामिल हैं। विशेषांक के लेख खण्ड में पण्डित माधवराव सप्रे, बी.ए. का 'पूर्वी और पश्चिमी सभ्यताओं में विभिन्नता तथा स्वदेशी साहित्य का महत्व' शीर्षक लेख सम्मिलित किया गया है। यह मूलतः सरस्वती के फरवरी, 1918 अंक में प्रकाशित हुआ था।

सप्रे जी ने बीसियों निबन्ध शिक्षा, विद्यार्थियों और अध्यापकों को ध्यान में रख कर लिखे। इनमें अध्ययन, मनन, स्वास्थ्य, चरित्र, आदर्श नागरिक, मितव्ययता, इत्यादि तत्वों को प्रेरक और मार्मिक ढंग से समझाया गया है। शिक्षा विषयक क्षेत्र के वे सर्वप्रिय निबंधकार थे इसीलिए पत्रिकाएँ उनसे आग्रहपूर्वक लेख लिखवाया करती थीं। 'विद्यार्थी' पत्रिका में उनके 20 निबंधों की लेखमाला जून 1915 से जनवरी 1918 तक प्रकाशित हुई है। इस लेखमाला की लोकप्रियता और माँग के कारण 'विद्यार्थी' के प्रकाशक रामजीलाल शर्मा ने हिन्दी प्रेस प्रयाग से संवत् 1981 (सन 1924) में इन निबन्धों की, 'जीवन संग्राम में विजय प्राप्ति के कुछ उपाय' शीर्षक से पुस्तक प्रकाशित की।

पण्डित माधवराव सप्रे ने अनेक निबन्ध आर्थिक विषयों पर लिखे। इनमें व्यापार नीति, औद्योगिक प्रशिक्षण, उद्योग-वाणिज्य, किसानों की शिक्षा, हड़ताल, जनता की दरिद्रता, भौतिक प्रभुता का फल, जापान की उन्नति का मूल कारण जैसे विषय शामिल हैं। उस काल की पत्रिकाएँ ऐसे थोथे बहाने नहीं तलाशती थीं कि पाठक क्या पढ़ना चाहते हैं, क्या नहीं? बल्कि सम्पादक का चिन्तन यह होता था कि पाठकों को क्या जानना चाहिए। पाठकों की मानसिक तैयारी की दृष्टि से सम्पादक विषयों का चयन और प्रकाशन करते थे। उनके लिए सुपात्र लेखकों का चयन करते थे।

सप्रे जी ने हमारे सामाजिक ह्रास के कुछ कारणों का विचार, यूरोप के इतिहास से सीखने योग्य बातें, राष्ट्रीयता की हानि का कारण, भारत की एक राष्ट्रीयता, हमारी सहायता कौन करेगा, राष्ट्रीय जागृति की मीमांसा इत्यादि प्रखर वैचारिक निबन्ध लिख कर भारतीय जन मानस को उद्वेलित करने का महत्वपूर्ण प्रयास किया है। 'स्वदेशी-आन्दोलन और बायकाट' निबंध और उसके हिन्दी जन-मानस पर पड़े व्यापक प्रभाव की चर्चा पहले ही की जा चुकी है। इंगलैण्ड की व्यापार नीति और अँगरेजों ने हमारे व्यापार-उद्योग को कैसे बरबाद किया जैसे राष्ट्रीय महत्व के मुद्दों का सम्यक विवेचन कर सप्रे जी ने भारतीयों के चित्त को झकझोरा है। सुप्तावस्था से जाग्रत करने

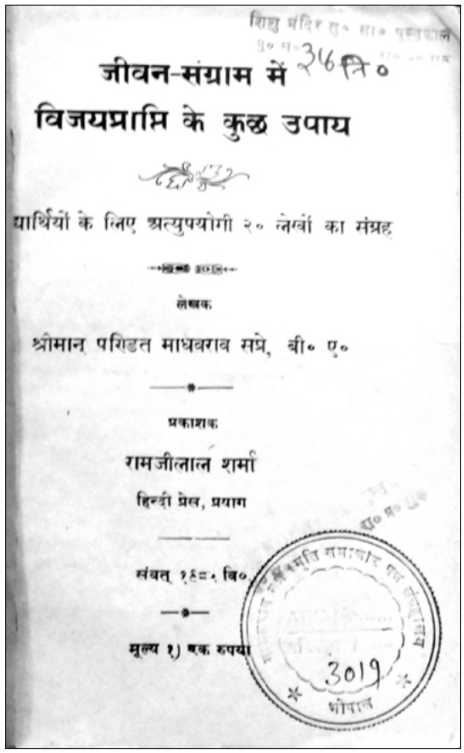

का यत्न किया है।

सितम्बर 1915 की 'मर्यादा' में पण्डित माधवराव सप्रे ने 'राष्ट्रीय जागृति की मीमांसा' निबन्ध लिखा। जिसमें वे लिखते हैं, ''पच्चीस तीस साल के पहिले कहा जाता था कि हिन्दुस्तान 'संक्रमण' अवस्था में है। करीब दस-बारह साल के पहले लोग कहते थे कि हिन्दुस्तान 'अशान्ति' की अवस्था में है। परन्तु अब कहा जाता है कि हिन्दुस्तान अपने 'पुनरुज्जीवन' के मार्ग पर है।'' इस सन्दर्भ में सप्रे जी ने रे.सी.एफ. एण्ड्रूज की पुस्तक 'The Renaissance in India' का उल्लेख किया है, जिसमें ''हमारी राष्ट्रीय जागृति की बहुत अच्छी मीमांसा की गई है।'' इस निबंध में अंग्रेजी राज के पहले भारत में समाज, शासन, शिक्षा आदि का विश्लेषण करते हुए वर्तमान दुरवस्था का चिन्तन किया है। साथ ही स्वदेशी का भाव तथा राष्ट्रीय जागृति से उत्पन्न राजनीतिक, औद्योगिक, सामाजिक और शिक्षा-सम्बन्धी आकांक्षाओं की व्याख्या की है।

पण्डित माधवराव सप्रे का मार्च 1918 की 'सरस्वती' में प्रकाशित निबंध 'भारत की एक - राष्ट्रीयता' बहुत महत्वपूर्ण है। उन्हें पश्चिमी लेखकों की यह धारणा चुभती है कि ''हिन्दुस्तान एक देश नहीं है। हिन्दुस्तानियों में राष्ट्रीयता के आवश्यक अंगों का अभाव है। हिन्दुओं को 'राष्ट्र' संज्ञा प्राप्त नहीं हो सकती। भारतीय राष्ट्र एक भ्रामक शब्द है। हिन्दुस्तान के निवासियों में उद्देशों की एकता नहीं है। उनमें अनेक जातियाँ हैं। उनके आचारों और विचारों में समता नहीं है। उनके रहन-सहन में बहुत भिन्नता देख पड़ती है। उनकी भाषा एक नहीं है। उनका कोई विश्वसनीय इतिहास भी नहीं है।'' सप्रे जी लिखते हैं, ''हम इन आक्षेपों का सप्रमाण खण्डन करके अपने पाठकों को यह बतलाना चाहते हैं कि भारतवर्ष का प्राचीन इतिहास है। हम लोगों में आन्तरिक एकता का अभाव नहीं है। इसीलिए यह देश राष्ट्र संज्ञा का यथार्थ पात्र है।'' ..... ''आर्य लोग उस समय भी सरस्वती और गङ्गा के किनारे अपना जीवन खेती इत्यादि में व्यतीत करते थे। जब संसार के अर्वाचीन उन्नत देशों के पूर्वज घोर अज्ञान के अन्धकार में पड़े थे तब भारत में आर्य्य जाति की ज्ञान ज्योति प्रज्वलित हो रही थी और अपनी दिव्य प्रभा से संसार के दूसरे देशों को भी लाभ पहुँचाती थी।'' ..... ''प्राचीन समय में यह देश तत्व ज्ञान, वैद्यक, ज्योतिष, छन्द : शास्त्र, सङ्गीत आदि शास्त्रों में पारङ्गत था। महात्मा बुद्ध के समान धर्मगुरु, कालिदास से कवि, ब्रह्मगुप्त के सदृश गणित शास्त्र प्रवीण और श्री शङ्कराचार्य्य से तत्वज्ञानी महात्माओं की जननी यही भारतमाता है। प्राचीन स्थानों के शिलालेखों और उपलब्ध सामग्रियों से पता लगता है कि भारतवर्ष में पुराने जमाने में अनेक प्रसिद्ध विश्वविद्यालय थे। भारतवर्ष की वर्तमान दशा को भी देख कर हमें हताश होने का कोई कारण नहीं दिखाई पड़ता। हमारे देश में अब भी रवीन्द्र नाथ टैगोर से लेखक, श्रीरामकृष्ण परमहंस से आत्मज्ञानी, गोखले और

मालवीयजी के समान राजनीतिज्ञ, बाबू सुरेन्द्रनाथ के समान वक्ता, लोकमान्य तिलक के समान राष्ट्र कल्याण के लिए आत्मसमर्पण करने वाले अलौकिक पुरुष और गान्धी के समान सत्याग्रही कर्मवीर उत्पन्न होते हैं।'' ..... ''आक्षेप करने वाले फिर भी कह सकते हैं कि यद्यपि हिन्दुओं की एक - राष्ट्रीयता इस प्रकार सिद्ध हो गई, तथापि मुसलमान, पारसी, ईसाई आदि भिन्न-भिन्न जातियों तथा उनके विभिन्न धर्मों के रहते हुए भारत की एक-राष्ट्रीयता कैसे मानी जा सकती है? इसका समाधान करने में अधिक विस्तार न करके केवल यह कह देना काफी होगा कि विभिन्न धर्म-मतों और जाति-भेदों से किसी राष्ट्र की एकता में कोई बाधा नहीं आती।''

समालोचना

'छत्तीसगढ़ मित्र' के माध्यम से पण्डित माधवराव सप्रे ने हिन्दी साहित्य में समालोचना को प्रतिष्ठित करने का महत्वपूर्ण कार्य किया है। 'छत्तीसगढ़ मित्र' में दस पुस्तकों की विस्तृत समालोचना की गई है। सत्रह पुस्तकों पर परिचयात्मक टिप्पणियाँ लिखी गई हैं। सप्रे जी के मत में ''किसी पुस्तक या पत्र की आलोचना करने में समालोचक को उचित है कि उस पुस्तक या पत्र के गुण दोष सप्रमाण सिद्ध करे।''

पण्डित श्रीधर पाठक की 51 पद्यों की पुस्तक 'जगत सचाई सार' की समालोचना करते हुए समालोचक ने लिखा है - ''इस्को, इस्से, उस्को, उस्से, जिस्को, जिन्की -- ऐसे शब्दों के प्रयोग क्या गद्य में और क्या पद्य में सर्वथैव त्याज्य समझे गये हैं।'' ..... ''दूसरे पद्य में 'वस्तु' शब्द का उपयोग एकवचन में करके उसके लिये बहुवचन सर्वनाम (उनसे) रक्खा है -- हमारी समझ में यह व्याकरण के नियमानुसार नहीं है।'' ..... ''30वें पद्य के 'अनन्त उत्पन्न अपार' में अनुप्रासालंकार (यमक) बहुत ही अच्छा सधा है पर उसी के साथ पुनरुक्ति का दोष भी लग गया है।''

'भाषा चन्द्रिका' पत्रिका की समालोचना करते हुए सप्रे जी ने अनेक शब्द उद्धृत किए हैं और टिप्पणी की है कि ''सम्पादक महाशय को हिन्दी भाषा में लिङ्ग भेद का ज्ञान बिलकुल नहीं है।'' ..... ''इस पत्रिका में व्याकरण सम्बन्धी अशुद्धियों के अतिरिक्त संस्कृत के बड़े बड़े कठिन शब्द और लम्बे लम्बे समास इतने भरे हैं कि भाषा की स्वाभाविक सुन्दरता बिलकुल नष्ट हो गई है और उसमें एक प्रकार की क्लिष्टता आ जाने से लेखक का भाव भी अत्यन्त दुर्बोध हो गया है।''

पण्डित श्रीधर पाठक ने अँगरेजी के प्रसिद्ध कवि गोल्डस्मिथ के काव्य 'द हरमिट' का 'एकान्तवासी योगी' और 'डिजर्टेड विलेज' का 'ऊजड़गाम' शीर्षक से पद्यानुवाद किया है। इनकी समालोचना विस्तार से करते हुए सप्रे जी ने लिखा है, ''अंग्रेजी के पंक्ति-प्रतिपंक्ति का उल्था नहीं है। यही ठीक भी है।'' एक-एक पद्य की भाव, भाषा और रस-छंद के आधार पर समीक्षा की गई है। समालोचक ने कविता के सम्बन्ध में एक तीखी टिप्पणी भी की है -- ''आजकल हिन्दुस्तान में काव्यरस के विषय में बड़ी गड़बड़ मच गई है। अर्थ की गंभीरता, नैसर्गिक वर्णन की कुशलता, पद की सुन्दरता और अलङ्कार की उपयुक्तता पर तो कोई भी ध्यान नहीं देता।''

'हास्य मंजरी' की समालोचना करते हुए सप्रे जी टिप्पणी करते हैं, ''हँसी जब तक परिमित प्रमाण पर स्थित है तभी तक उसमें सुशिक्षा मिलने की आशा की जा सकती है। परन्तु यदि वह सभ्यता की मर्यादा को लाँघ कर अनियमित हो जाये तो उससे सुशिक्षा मिलने के पलटे मन पर कुसंस्कार हो जाने का भय है।'' इसी समालोचना में भाषा के सम्बन्ध में सप्रे जी का दृष्टिकोण भी सामने आता है --''हम उर्दू या फारसी के उन शब्दों से विरोध नहीं रखते जो हिन्दी की बोलचाल में कई बरसों तक प्रयुक्त हो जाने के कारण अब बिलकुल साधारण और परिचित हो गये हैं; और जहाँ कहीं प्रसंगानुसार ऐसे शब्दों का उपयोग

लेखक को आवश्यक जान पड़े वहाँ उन शब्दों से काम लेने का उसे पूर्ण अधिकार है; परन्तु अप्रासंगिक स्थलों में और बिना हेतु किसी पराई भाषा का एक शब्द भी लेना हमें स्वीकार नहीं है।''

पण्डित कामता प्रसाद गुरु की 'भाषा वाक्य पृथक्करण' की स-तर्क समीक्षा सप्रे जी ने की है। भाषा के लिए व्याकरण की महत्ता प्रतिपादित करते हुए, वे लिखते हैं, ''हम तो ऐसा समझते हैं कि हिन्दी में व्याकरण विषयक ग्रन्थ जितने अधिक लिखे जाँय उतना ही इस भाषा के सीखने वालों को अधिक लाभ होगा। वैय्याकरण एक प्रकार का मार्ग प्रदर्शक है। जब बड़े-बड़े कवि अपनी कल्पना शक्ति के बल पर कई विचित्र और अनूठे प्रयोगों का उपयोग अपने काव्य में कर जाते हैं, जब बड़े बड़े वक्ता अपनी वाक् शक्ति के प्रवाह में हजारों नये शब्द गढ़ कर धर देते हैं और जब बड़े-बड़े ग्रन्थकार प्रस्तुत शब्दों के अनेक रूपान्तर कर डालते हैं; और जब ये कुछ काल तक भाषा में रूढ़ होकर प्रचलित होने लगते हैं तब उनके अर्थों का निर्णय करके जुदे-जुदे वर्ग बनाना, नामकरण करना और विद्यार्थियों के हितार्थ नियमबद्ध करना व्याकरणकार का काम है। यदि यह अत्यन्त महत्व का काम सम्यक् प्रकार से सम्पादित न हो तो साहित्य का एक अंग अधूरा ही पड़ा रहेगा।''

स्त्री शिक्षा की पुस्तिका 'बालाबोधिनी' की समालोचना में सप्रे जी की स्त्री विषयक मान्यताएँ स्पष्ट होती हैं। उनका मत है कि ''जब तक समाज में स्त्री और पुरुष दोनों के अधिकार समान भाव के न होंगे तब तक समाज की उन्नति न होगी और स्त्री-पुरुषों में स्वाभाविक प्रेम का बन्धन न रहेगा।'' वे सावधान भी करते हैं, ''व्यक्ति स्वातंत्र्य का नाश होते ही स्वाभाविक प्रेम का लोप हो जाता है।''

'भारत गौरवादर्श' की समालोचना करते हुए सप्रेजी ने कपोल कल्पनाओं और भ्रान्त धारणाओं के आधार पर थोथे गाल बजाने वालों को आड़े हाथों लिया है। इस किताब में 'दूर्दर्शकयंत्र - दूर्बीन' के विषय में दावा किया गया है कि ''व्यास जी ने संजय को एक दूर्बीन दी थी कि यहाँ से कुरुक्षेत्र का वृत्तान्त महाराज धृतराष्ट्र को बतलाते रहना (देखो महाभारत भीष्म पर्व अध्याय 2 श्लोक 10)।'' बस तीन लकीरों में दूर्बीन विषय का प्रतिपादन हो चुका! और पाठकों को अब मान लेना चाहिए कि 'ऐतिहासिक प्रमाणों से भारतवर्ष का गौरव' भी स्थापित हो चुका। जिस श्लोक के आधार पर भारत वर्ष में दूर्बीन का होना बतलाया गया है, उसे देखिये -

''चक्षुषा संजयो राजन् दिव्येनैव समन्वितः।
कथयिष्यिति ते युद्धं सर्वज्ञश्च भविष्यति।।''
(भीष्म पर्व अध्याय 2, श्लोक 10)

इसमें तो कहीं भी दूर्बीन या तल्लक्षण सूचक शब्द का नाम तक नहीं है। व्यास जी ने संजय को दूर्बीन नहीं दी थी; दिव्य-चक्षु दिये थे। सप्रे जी लिखते हैं, ''जिसे भारत के यथार्थ गौरव का वर्णन करना है उसे उचित है कि वह भारत के गुण और दोष दोनों का ठीक-ठीक वर्णन करे।''

पण्डित श्याम बिहारी मिश्र और पण्डित शुकदेव बिहारी मिश्र के काव्य ग्रन्थ 'लवकुश चरित्र' की समालोचना सप्रे जी ने अगस्त 1901 से दिसंबर 1901 तक 'छत्तीसगढ़ मित्र' के पाँच अंकों में की है। गोस्वामी तुलसीदास को उद्धृत किया है--

''निज कवित्त किहिं लाग न नीका।
सरस होय अथवा बहु फीका।।''

यह अपने आप में एक टिप्पणी ही है। ग्रन्थकारों के इस कथन पर उन्होंने आश्चर्य किया है कि ''विचार करने पर लवकुश चरित्र का विषय ध्यान आया और उसी समय पहला षट्पद बना -- बस फिर क्या था, कुल एक मास के अल्प परिश्रम में यह ग्रन्थ तैयार हो गया।'' जबकि सप्रे जी का मत है कि ''जो कवि अपना नाम अपने काव्य ग्रन्थ के द्वारा इस भूलोक में अजरामर करना चाहते हैं वे विषय चुनने में शीघ्रता नहीं करते। मिल्टन के जीवन चरित्र में लिखा है कि उसने

अपने महाकाव्य Paradise Lost के लिए 'मनुष्य का अधःपात' -- The Fall of Man -- यह विषय कई बरसों में निश्चित किया था।'' 'लवकुश चरित्र' पर इस सन्दर्भ में उनकी टिप्पणी है, ''क्या लवकुश चरित्र के मर्मज्ञ पाठकों के मन में यह बात खटकती न होगी कि जिस परिमाण से विषय के नियत करने तथा ग्रन्थ के बनाने में शीघ्रता की गई है उसी परिमाण से इस पुस्तक में कथा की विचित्रता, भाव की न्यूनता, वर्णन की अनुपमता, स्वभाव का निरूपण और रस की हृदयंगमता आदि उत्तम काव्य के गुणों का बहुत कुछ लोप भी हो गया है।'' समालोचना में अच्छे का स्वीकार भी है -- ''इस ग्रन्थ का सब से मनोहर लक्षण भाषा की सरलता है।''

सप्रे जी ने 'भारत मित्र' को उद्धृत किया है -- ''जैसे जौहरी पार्थिव रत्नों की परख कर उनका मूल्य निर्धारित करता है उसी प्रकार साहित्य निष्णात विद्वान साहित्य के रत्नों की परीक्षा कर उनके गुण-दोष दिखलाते और मूल्य बतलाते हैं। इस व्यापार को समालोचना कहते हैं।''

अनुवाद

हिन्दी साहित्य की श्रीवृद्धि के लिए अन्य भाषाओं के उत्तम ग्रन्थों का अनुवाद आवश्यक होता है। पण्डित माधवराव सप्रे ने इस दिशा में महत्वपूर्ण काम किया है। ज्ञान-विज्ञान के सभी विषयों पर उत्तम पुस्तकें उपलब्ध हों, यह आवश्यकता सप्रे जी ने बहुत पहले समझ ली थी। किसी भाषा की सामर्थ्य का परिचय उसके व्यापक और विशाल शब्द भंडार और साहित्य भण्डार से ही मिलता है।

सप्रे जी अनुवाद के मर्म को भली भाँति समझते थे। पण्डित श्रीधर पाठक की अनूदित काव्य कृति 'एकान्तवासी योगी' की समालोचना करते हुए वे कहते हैं -- ''अनुवाद कर्म बड़ा कठिन है। इसमें कई बातों की ओर ध्यान देना पड़ता है। जिस विषय का उल्था करना है उसका मर्म जाने बिना काम नहीं चल सकता।''

अनुवादक के लिए सप्रे जी ने पाँच कसौटियाँ मानी हैं --

1. जिस भाषा में मूल ग्रन्थ लिखा गया हो उसका पूरा-पूरा ज्ञान उल्था करने वाले को होना चाहिए।
2. जिस भाषा में उल्था करना है उसका भी ज्ञान कुछ कम न हो। मूल ग्रन्थ का भाव समझ लेने में कुछ बड़ी बात नहीं है, पर उसी को दूसरी भाषा में यथायोग्य प्रगट करना बड़ा ही कठिन काम है। किसी-किसी भाषा में ऐसे भाव होते हैं कि जो पराई भाषा से व्यक्त ही नहीं हो सकते और हुए भी तो अधूरे रह जाते हैं।
3. जिस विषय का अनुवाद करना है उसका अच्छी तरह से ज्ञान होना चाहिए।
4. जिस विषय का उल्था करना है वह उल्था करने योग्य हो।
5. अनुवादक मूल ग्रन्थकार के साथ सहानुभूति रख कर समान वृत्ति हो जाय। जब ऐसा होगा तभी मूल ग्रन्थ का भाव अनुवाद में पूर्ण रीति से चित्रित हो सकेगा।

अनुवाद सटीक हुआ या नहीं, इसे परखने के लिए भी वे मापदण्ड बताते हैं -- ''पहले यह कि भाषान्तर जथातथ्य और मूल ग्रन्थ के अनुरूप बना है वा नहीं, मूल ग्रन्थ के सम्पूर्ण भाव अनुवाद में आये हैं वा नहीं। दूसरी बात यह है कि, स्वतंत्र रीति से यह ग्रन्थ कैसा बना है; जिन लोगों के लिए अनुवाद किया गया है उनको वह कहाँ तक रुचिकर और ग्राह्य हुआ। एक भाषा से दूसरी भाषा में उल्था करने में अनुवाद करने वाले को मूल ग्रन्थकार ही के पीछे-पीछे चलना पड़ता है, वहाँ उसके निज की कल्पना का उसको बहुत-सा उपयोग नहीं हो सकता। परन्तु वह एक काम अलबत्ते कर सकता है कि अनुवाद की भाषा सरल, भाव सुबोध, और रस मधुर रख कर अपनी योग्यता स्वतंत्र रीति से भी प्रगट करे।''

पण्डित माधवराव सप्रे ने श्री समर्थ रामदास स्वामीकृत महत्वपूर्ण मराठी ग्रन्थ 'दासबोध' का अनुवाद इसी नाम से किया है। सन् 1660 में इस मूल ग्रन्थ की रचना हुई थी। हिन्दी में इसका पहला अनुवाद सप्रे जी ने सन 1910 में किया। 'दासबोध' ने निस्संदेह हिन्दी में अध्यात्म और दर्शन के भाव पक्ष को समृद्ध किया है।

सप्रे जी का दूसरा महत्वपूर्ण अनुवाद लोकमान्य बाल गंगाधर तिलक का अनुपम ग्रन्थ 'श्रीमद्भगवद्गीता रहस्य अथवा कर्मयोगशास्त्र' है। इसका प्रकाशन सन 1916 में हुआ। सप्रे जी को अनुवाद का कार्य सौंपते समय ''ग्रन्थकार ने यह इच्छा प्रकट की कि मूल ग्रन्थ में प्रतिपादित सब भाव ज्यों के त्यों हिन्दी में पूर्णतया व्यक्त किये जायँ। इसलिये मैंने अपने लिए दो कर्त्तव्य निश्चित किये -- (1) यथामति मूल भावों की पूरी पूरी रक्षा की जावे, और (2) अनुवाद की भाषा यथाशक्ति शुद्ध, सरल, सरस और सुबोध हो।'' महात्मा तिलक के 'गीता रहस्य' का यह अनुवाद हिन्दी (और किसी भी) भाषा में पहला अनुवाद है। यह ग्रन्थ हिन्दी में अनुपमेय उपलब्धि है।

सप्रे जी का तीसरा उल्लेखनीय अनुवाद 'महाभारत मीमांसा' है। यह श्री चिन्तामणि विनायक वैद्य के श्रीमन्महाभारत के 'उपसंहार' नामक मराठी ग्रन्थ का अनुवाद है। पुणे की ग.वि. चिपलूणकर मंडली ने इस ग्रन्थ का प्रकाशन सन 1920 में किया। इनके अलावा सप्रे जी द्वारा श्री दत्तात्रेय गोपाल लिमये की मराठी पुस्तक का अनुवाद 'भारतीय युद्ध', चित्रशाला प्रेस पुणे से संवत् 1970 में, दत्त-भार्गव नामक मराठी ग्रंथ का अनुवाद 'श्री दत्त भार्गव संवाद' नाम से, संवत् 1982 में एवं श्री हरि गणेश गोडबोले के मराठी ग्रंथ 'आत्म विद्या' का अनुवाद भी महत्वपूर्ण हैं।

अर्थशास्त्रीय चिंतन

बृहत्तर बंगाल की चेतना और शक्ति को कुचलने के लिए कर्जन ने बंग भंग का फैसला

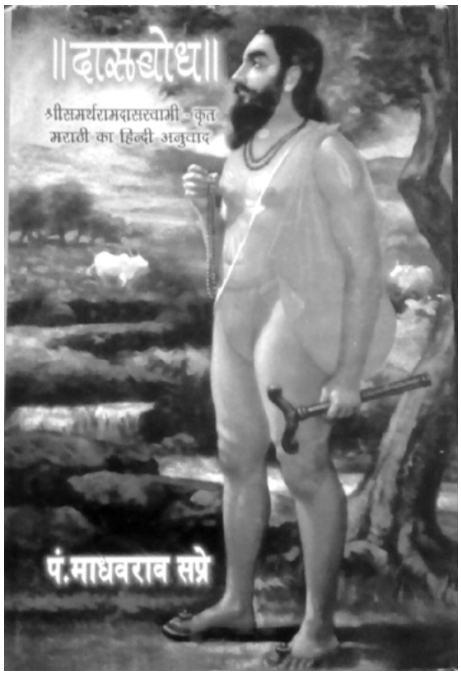

किया। 16 अक्टूबर 1905 को 'पूर्वी बंगाल और असम' तथा 'पश्चिम बंगाल' दो प्रान्त हो गए। इस एक परिघटना ने न केवल बंगाल बल्कि पूरे देश को जाग्रत और उद्यत कर दिया। प्रतिकार के लिए एक बड़े संकल्प ''विदेशी वस्तुओं का त्याग और केवल स्वदेशी-वस्तु के व्यवहार'' की अटल प्रतिज्ञा ली गई। लोकमान्य बाल गंगाधर तिलक के 'केसरी' ने इस विषय में काफी कुछ लिखा। हिन्दी भाषी क्षेत्रों में जन जागरण के लिए पण्डित माधवराव सप्रे ने उसी के आधार पर अगस्त 1906 में एक लम्बा निबंध लिखा -- 'स्वदेशी-आन्दोलन और बायकाट अर्थात भारतवर्ष की उन्नति का एकमात्र उपाय।' 64 पृष्ठ के इस निबंध में सप्रे जी ने बहुत सरल भाषा और बोधगम्य शैली में भारत की दुर्दशा और फिरंगियों की लूट का बेबाक चित्रण कर विषय की गंभीरता को समझाया है। इस लेख ने जन चेतना को झकझोरा। मानो पराधीनता के अभिशाप से साक्षात्कार करा दिया हो। सप्रे जी ने अर्थशास्त्र विषयक कई अन्य निबंध भी लिखे हैं जो सरस्वती, मर्यादा, प्रभा, श्री शारदा जैसी प्रतिष्ठित पत्रिकाओं में समय-समय

पर प्रकाशित हुए हैं। वे बहिष्कार की शक्ति और सामर्थ्य से परिचित थे। इसीलिए 'स्वदेशी-आन्दोलन और बायकाट' निबंध में दो टूक टिप्पणी कर सके -- ''यह एक रामबाण-अस्त्र है जिसका प्रयोग, हम लोग, स्वदेश की यथार्थ उन्नति के लिए भली भाँति कर सकते हैं।''

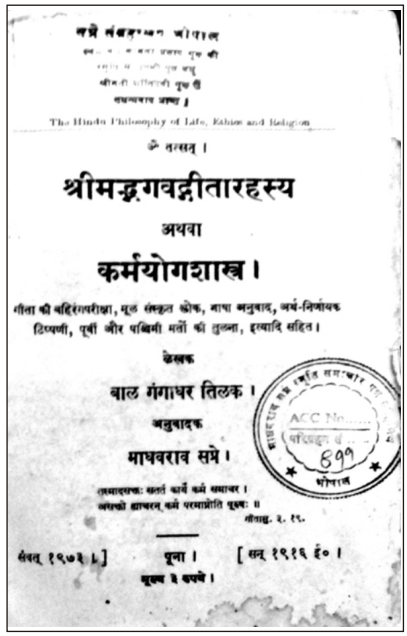

The Hindu Philosophy of Life, Ethics and Religion

श्रीमद्भगवद्गीतारहस्य

अथवा

कर्मयोगशास्त्र।

गीता की बहिरंगपरीक्षा, मूल संस्कृत श्लोक, भाषा अनुवाद, अर्थ-निर्णायक टिप्पणी, पूर्वी और पश्चिमी मतों की तुलना, इत्यादि सहित।

लेखक

बाल गंगाधर तिलक।

अनुवादक

माधवराव सप्रे।

संवत् १९७३ ..] पूना। [सन् १९१६ ई०।

मूल्य ३ रुपये।

सरस्वती के सम्पादक आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी ने अपनी पुस्तक 'सम्पत्ति शास्त्र' की भूमिका में लिखा है -- ''सम्पत्तिशास्त्र विषयक पुस्तकों की जरूरत को पूरा करने -- इस अभाव को दूर करने -- की, जहाँ तक हम जानते हैं, सबसे पहले पण्डित माधवराव सप्रे, बी.ए., ने चेष्टा की। हिन्दी में अर्थशास्त्र-सम्बंधी एक पुस्तक लिखे आपको बहुत दिन हुए। परन्तु पुस्तक आपके मन की न होने के कारण उसे प्रकाशित करना आपने उचित नहीं समझा। आपकी राय है कि अर्थशास्त्र-सम्बन्धी पुस्तक ऐसी होनी चाहिए जिसमें इस देश की साम्पत्तिक अवस्था का विचार विशेष प्रकार से किया गया हो। आपका कहना बहुत ठीक है। आपको जब हमने लिखा कि सम्पत्ति शास्त्र पर हम एक पुस्तक लिखने का इरादा रखते हैं तब आपने प्रसन्नता प्रकट की और अपनी हस्तलिखित पुस्तक हमें भेज दी। उससे हमने बहुत लाभ उठाया है। एतदर्थ हम आपके बहुत कृतज्ञ हैं।''

काशी नागरी प्रचारिणी सभा की हिन्दी वैज्ञानिक शब्दावली योजना में अर्थशास्त्र खण्ड की शब्दावली तैयार करने का दायित्व सप्रेजी को सौंपा गया। मुंबई के विद्वानों से तद्विषयक संपर्क के लिए श्री माधवराव सप्रे को भेजा गया। वहाँ वे सर्वश्री टी.के. गजदर, डा. रामकृष्ण गोपाल भंडारकर, डा. एम.जी. देशमुख से मिले। अर्थशास्त्र के अँगरेजी के 1320 शब्दों के लिए हिन्दी के 2115 शब्द बनाए गए। संवत 1962 (सन 1905 ई.) में पूरा कोश छप कर तैयार हो गया। भारतीय भाषाओं में वैज्ञानिक कोश निर्माण का यह प्रथम उपक्रम है जो सप्रे जी के अर्थशास्त्र विषयक अध्ययन और अवदान का प्रमाण है।

कहानी

यद्यपि सप्रे जी की छः कहानियाँ 'छत्तीसगढ़ मित्र' में प्रकाशित हुई हैं। ये हैं -- सुभाषित रत्न 1-2 (जनवरी, फरवरी 1900), एक पथिक का स्वप्न (मार्च 1900), सम्मान किसे कहते हैं (अप्रैल 1900), आजम (जून 1900) और एक टोकरी भर मिट्टी (अप्रैल 1901)। किन्तु कथाकार के रूप में सप्रे जी की पहचान नहीं बनी। यद्यपि लोकप्रिय कहानी पत्रिका 'सारिका' में यह बहस चली थी कि सप्रे जी की 'एक टोकरी भर मिट्टी' हिन्दी की पहली मौलिक कहानी है, परन्तु यह अवधारणा हिन्दी-जगत में सर्वमान्य नहीं हुई।

राष्ट्रभाषा हिन्दी

हिन्दी साहित्य सम्मेलन का पन्द्रहवाँ अधिवेशन 9-10-11 नवम्बर 1924 को देहरादून में होने वाला था। इसकी अध्यक्षता पण्डित राधाचरण गोस्वामी को करनी थी। अकस्मात ऐसी स्थितियाँ बनीं कि गोस्वामी जी नहीं आ सके। राष्ट्रीय अधिवेशन हिन्दी की विशिष्ट विभूतियों का समागम होता था। इसका

सभापतित्व श्रेष्ठता और वरिष्ठता के आधार पर सौंपा जाता था। स्वागत समिति ने तब हिन्दी के अनन्य सेवक पण्डित माधवराव सप्रे को सभापति बनाने का निर्णय लिया। सप्रे जी ऐसी किसी तैयारी से तो गये नहीं थे, परन्तु उनके विचार सूत्रों ने सम्मेलन को सारवान् और सार्थक बनाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई।

आरम्भिक वक्तव्य में पण्डित माधवराव सप्रे ने कहा -- ''मैंने इस बात का अनुभव किया कि इस विशाल देश में एक ऐसी भाषा की आवश्यकता है, जिसे सब प्रान्तों के लोग अपनी राष्ट्रभाषा मानें, और वह भाषा हिन्दी को छोड़ कर अन्य कोई नहीं है। मैं महाराष्ट्री हूँ, परन्तु हिन्दी के विषय में मुझे उतना ही अभिमान है, जितना किसी हिन्दी भाषी को हो सकता है। मैं चाहता हूँ कि इस राष्ट्रभाषा के सामने भारतवर्ष का प्रत्येक व्यक्ति इस बात को भूल जावे कि मैं महाराष्ट्र हूँ, मैं बंगाली हूँ, मैं गुजराती हूँ, या मैं मदरासी हूँ। ये मेरे 35 वर्ष के विचार हैं और तभी से मैंने इस बात को निश्चय कर लिया है कि मैं आजीवन हिन्दी भाषा की सेवा करता रहूँगा। मैं राष्ट्रभाषा को अपने जीवन में ही सर्वोच्च आसन पर देखने का अभिलाषी हूँ।''

यह केवल विचारों की स्पष्टता का ही द्रष्टान्त नहीं है, सप्रे जी ने आजीवन हिन्दी की सेवा और साधना की। सम्मेलन के समापन सत्र में सभापति के आसन से पण्डित माधवराव सप्रे ने कहा -- ''जैसे नाटक के भिन्न-भिन्न पात्र रूप धर कर आते हैं और अपना कर्त्तव्य करके चले जाते हैं। वास्तव में, उनका मूल स्वरूप कुछ और ही होता है, परन्तु पराधीनता में आकर उनको दूसरे का कर्त्तव्य करना होता है। वे जिस प्रकार पराधीनता का अनुभव करते हैं, उसी प्रकार देवियों, भाइयों, आप भी इस पराधीनता का अनुभव करें, और इस बात का प्रण करें कि हम इस पराधीनता को अवश्य दूर करेंगे, इन पराधीनता की शृंखलाओं में हमको सुख नहीं मिल सकता। पराधीनता की जंजीरों को तोड़ने के लिए अनेक साधन हैं। उनमें हिन्दी भाषा का प्रचार करना एक मुख्य साधन है। इसलिए भाइयों! आओ, हम सब लोग मिल कर इस बात का प्रण करें कि हम राष्ट्रभाषा का झण्डा भारत के कोने-कोने में फहरा देंगे। मौका आ जायगा, तो हम शरीर का भी बलिदान कर देने में आगा-पीछा नहीं करेंगे। यही राष्ट्रभाषा के नाम पर हम आप लोगों से भिक्षा माँगते हैं। परमात्मा वह दिन शीघ्र लावें, जब हम इस बात को सिद्ध कर देवें कि अब हम बहुत दिन तक इस गुलामी में जकड़े नहीं रह सकते।''

सप्रे जी के ये उद्‌गार राष्ट्र भाषा की महत्ता का दिग्दर्शन कराते हैं, राष्ट्र जीवन में भाषा के महत्व का मर्म समझते हैं, भाषा को देश की स्वाधीनता और पराधीनता के सन्दर्भ में परिभाषित करते हैं। देश का दुर्भाग्य है कि हम अभी भी इस सीख को हृदयंगम नहीं कर सके।

आलेख का समापन राजर्षि पुरुषोत्तम दास टण्डन की इस टिप्पणी के साथ करना उपयुक्त होगा -- ''सप्रे जी उन थोड़े से इने गिने मनुष्यों में हैं, जिन्होंने अपना सुख त्याग कर देश हित के लिए अपना जीवन समर्पण किया है। उन गिने हुए देशसेवकों में हैं, जिन्होंने मातृभाषा दूसरी होते हुए भी, हिन्दी को राष्ट्रभाषा के नाते अपनाया है। ..... उनका गीता रहस्य तो बहुतों ने देखा है। वह कितनी ऊँची वस्तु है, प्रायः सब ही पढ़े-लिखे लोग जानते हैं। किन्तु जो उनके जीवन-रहस्य से परिचित हैं वे इतना और अधिक जानते हैं कि सप्रे जी का व्यक्तित्व कितने उच्च आदर्श का है। सप्रेजी का सम्बन्ध राष्ट्रीयता से प्राचीन है। वह केसरी होकर भारत में गरज चुके हैं। उनकी वाणी से कितने ही शत्रुओं के हृदय दहल चुके हैं। सप्रे जी जैसी महान आत्माओं द्वारा उसी प्रकार हिन्दी केसरी फिर गरजेगा और राष्ट्र को आगे बढ़ावेगा।''

(साहित्य अकादेमी द्वारा सद्यः प्रकाशित 'माधवराव सप्रे रचना-संचयन' के प्राक्कथन से उद्‌धृत)

(Email-editor.anchalikpatrakar@gmail.com)

मूर्धन्य संपादक

एस. कस्तूरीरंगा अय्यंगार

■ संतोष कुमार शुक्ल

श्री एस. कस्तूरीरंगा अय्यंगार भारत के उन महान स्वतंत्रता सेनानियों और पत्रकारों में से थे जिन्होंने स्वतंत्रता संग्राम के प्रवक्ता 'हिन्दू' समाचार पत्र के माध्यम से देश और प्रदेश में पत्रकारिता के मानदण्ड स्थापित कर स्वतंत्र पत्रकारिता का पथ प्रशस्त किया था। वैसे तो वे 1895 में 'हिन्दू' के कानूनी सलाहकार थे, परन्तु अप्रैल 1905 में उन्होंने 'हिन्दू' को खरीद लिया था और उसके संपादक जीवनपर्यन्त (1923) रहे। 'हिन्दू' की स्थापना 20 सितम्बर 1878 को 6 नवयुवकों की एक टोली ने साप्ताहिक के रूप में की थी। अक्टूबर 1883 से यह पत्र सप्ताह में 3 बार छपने लगा था। जनवरी 1889 से जब 'हिन्दू' दैनिक हुआ तब इसकी वित्तीय स्थिति ठीक नहीं थी। स्वतंत्रता संग्राम का वाहक होने के कारण यह अँगरेजों की आँख की किरकिरी भी था। अतः 1901 में इसके मालिकों ने इसे एक ज्वाइंट स्टाक कम्पनी-द हिन्दू लि. के अन्तर्गत प्रकाशित करना प्रारम्भ कर दिया था।

श्री एस. कस्तूरीरंगा अय्यंगार का जन्म 15 दिसम्बर 1859 को तन्जोर में हुआ था जहाँ उनके पिता जिलाध्यक्ष के कार्यालय में नौकरी करते थे। पिता के तीन पुत्रों में वे सबसे छोटे थे। स्कूल की शिक्षा कुम्बकोरम में पूरी कर वे प्रेसीडेन्सी कालेज चेन्नै में पढ़ने आ गए थे। वहाँ से 1879 में उन्होंने बी.ए. पास किया। इसके बाद वे चेन्नै में सरकारी नौकरी करने लगे। नौकरी के दौरान उन्होंने 1884 में कानून की डिग्री प्राप्त की। इसके बाद वे सरकारी नौकरी से त्यागपत्र देकर कोयम्बटूर में वकालत करने लगे। अपनी मेहनत और सूझबूझ के कारण थोड़े समय में ही उन्होंने इतना नाम कमाया कि पूरे क्षेत्र में वे प्रसिद्ध हो गए। चूँकि उनका झुकाव राजनीति की ओर था अतः वे 1894 में चेन्नै आकर बस गए और वहीं वकालत करने लगे। चेन्नै में उनकी मित्रता सर सी. शंकरन नायर, टी. रंगाचारी, डा. टी.एम. नायर आदि से अधिक थी। ये सभी स्वतंत्रता आन्दोलन की अग्रिम पंक्ति के नेता भी थे। चेन्नै में वे सामाजिक गतिविधियों में भी भाग लेने लगे थे और मद्रास महाजन सभा के संस्थापक सदस्यों में से थे। वे कांग्रेस के भी नेता थे और कांग्रेस के सभी कार्यक्रमों में सक्रिय भाग लेते थे। यही कारण था कि जब 1898 और 1903 में चेन्नै में कांग्रेस के अधिवेशन हुए तब वे स्वागत समिति के सचिव बनाए गए थे। तब तक 'हिन्दू' चेन्नै में स्थापित हो चुका था। श्री कस्तूरीरंगा हिन्दू में 'कानूनी' मुद्दों पर लेख लिखा करते थे। उनका लेखन पारदर्शी होता था। कानूनों के उद्देश्यों की व्याख्या करते हुए सरल और बोधगम्य भाषा में विचारों की अभिव्यक्ति में वे माहिर थे अतः लेखक के रूप में भी वे विख्यात होते जा रहे थे। इसीलिए 1895 में वे हिन्दू के कानूनी सलाहकार नियुक्त कर दिए गए थे।

सन 1902-3 में 'हिन्दू' की वित्तीय स्थिति काफी खराब हो गई थी। तभी उनके मन में 'हिन्दू' को खरीदकर उसे चलाने की इच्छा हुई। परन्तु उनके परिवार के सदस्य इसके पक्ष में नहीं थे। उन्होंने अपने मित्रों से सलाह ली। 4 अप्रैल 1905

को उन्होंने अपने मित्र शंकरन नायर और टी. रंगाचारी के साथ मिलकर श्री वीर राघवाचारी से 75,000/- रुपए में 'हिन्दू' खरीदने का सौदा पक्का कर लिया। इसके लिए उन्होंने सालेम के एक वकील मित्र सी. विजय राघवाचारी से 10 हजार रुपए उधार भी लिए। इस सौदे की सफलता पर अनेक लोगों को शंका थी। तब कस्तूरीरंगा 40 वर्ष के हो गए थे और उन्हें दैनिक पत्र प्रकाशित करने में आने वाली कठिनाइयों का कोई अनुभव नहीं था। परन्तु उनकी इच्छा शक्ति काफी प्रबल थी। 'हिन्दू' के माध्यम से वे समाज और देश की सेवा करना चाहते थे। वे स्वयं 'हिन्दू' के संपादक हो गए और हिन्दू के पूर्व संपादक करुणाकर मेनन को संयुक्त संपादक बना दिया गया। अभी एक माह ही बीता था कि संयुक्त संपादक श्री मेनन ने त्यागपत्र देकर अपना स्वयं का समाचार पत्र 'इंडियन पैट्रियट' प्रकाशित करना प्रारम्भ कर दिया। इसी बीच व्यवस्थापक वीर राधवाचार्य भी सेवानिवृत्त हो गए, अतः कस्तूरीरंगा के ऊपर संपादन और व्यवस्था की पूरी जिम्मेदारी आ पड़ी। उस समय चेन्नै से दो दैनिक 'द मद्रास मेल' और 'द मद्रास टाइम्स' भी प्रकाशित हो रहे थे जो एंग्लोइंडियन समाचार पत्र थे। 'हिन्दू' चेन्नै का एकमात्र ऐसा पत्र था जो जन भावनाओं को मुखरित करता था। इस समय वह प्रतिदिन 18 पृष्ठों में छपता था। अनेक नगरों में इसके संवाददाता नियुक्त हो चुके थे। इसमें प्रथम पृष्ठ पर विज्ञापन छपते थे जो इसकी अपनी विशेषता और पहचान थी। उन्होंने समाचार पत्र को स्वावलम्बी बनाने का बीड़ा उठा लिया था। व्यवस्था प्रणाली को चुस्त किया और दान तथा लोगों से प्राप्त वित्तीय सहायता को हतोत्साहित किया। समाचार पत्र समय पर छपता और वितरित होता था और इसके समाचार सही और वस्तुनिष्ठ होते थे। इसने रायटर की सेवाएँ लेना भी प्रारम्भ कर दिया था। यही कारण था कि इसकी प्रसार संख्या बढ़ती चली गई और विज्ञापनों की संख्या भी दिनों दिन बढ़ती रही। धीरे धीरे क्षेत्र के नगरों में भी संवाददाता नियुक्त किए गए। अब यह पत्र समाचारों के प्रस्तुतीकरण के बारे में श्रेष्ठ समझा जाने लगा था। इसमें प्रतिदिन अदालतों के मामलों की रिपोर्टिंग भी प्रकाशित होती थी जिनके कारण इसकी ग्राहक संख्या लगातार बढ़ती गई। 'संपादक के नाम पत्र' कालम में अनेक सामयिक और विवादग्रस्त विषयों पर जनता के पत्र छपने लगे थे। यह कालम भी खूब प्रचलित हुआ और बुद्धिजीवी और पढ़े लिखे पाठक इससे जुड़ गए।

श्री कस्तूरीरंगा की मेहनत और दूरदर्शिता के कारण जब 'हिन्दू' स्वावलम्बी होने लगा तब उनके दोनों साथी श्री शंकरन नायर और श्री टी. रंगाचारी उनसे अलग हो गए। अतः अब वे स्वयं ही 'हिन्दू' के मालिक हो गए। स्वयं के स्वामित्व के पहले वर्ष में उन्हें केवल 150 रुपए का मुनाफा हुआ। अब उन्हें समाचार पत्र के संचालन और उसकी व्यवस्था की पेंचीदगियों का पूरा अनुभव हो गया था। साथ ही उनमें यह आत्मविश्वास भी आ गया था कि वे समाचार पत्र की सभी शाखाओं को भलीभाँति संचालित कर एक अच्छा समाचार पत्र प्रकाशित कर सकते हैं। वे देश के राजनीतिक घटनाक्रम पर गहराई से मनन करने लगे थे और अपने सुझाव प्रस्तुत करने में कभी नहीं हिचकते थे। उन्होंने राष्ट्रीय नेताओं द्वारा चलाए जा रहे आन्दोलन को भी आड़े हाथों लिया और हिन्दू में 'चेंज इन मेथड आफ पोलिटिकल एजीटेशन' शीर्षक से एक गम्भीर संपादकीय लिखकर सभी को चौकन्ना कर दिया।

श्री कस्तूरीरंगा के ऐसे ही संपादकीयों का जनता और नेताओं दोनों पर आशातीत प्रभाव पड़ा और उनकी लेखनी की धाक जम गई। उन्होंने जो रचनात्मक सुझाव दिए उन्हें सभी ओर सराहा गया और वे कांग्रेस और जनता दोनों के सच्चे हितैषी के रूप में स्थापित हो गए। सन 1905 में बंगाल के विभाजन के बाद जब पूरे देश में स्वदेशी आन्दोलन की हवा बहने लगी तब

'हिन्दू' ने इसका जोरदार समर्थन कर इसमें सहभागी बनने के लिए जनता को प्रोत्साहित किया।

उनका दृष्टिकोण काफी व्यापक था और वे मुद्दों की तह तक जाकर उनका सही विश्लेषण कर अपने पाठकों को शिक्षित करना अपना पुनीत कर्तव्य समझते थे। उन्होंने भारत की अस्मिता के संरक्षण के लिए 'हिन्दू' के माध्यम से अनेक लड़ाइयाँ लड़ीं। जब मद्रास सरकार ने 'स्वदेशमित्रम' के संपादक जी. सुब्रमनिया अय्यर और तमिल साप्ताहिक 'इंडिया' के संपादक एम. श्रीनिवासन के खिलाफ देशद्रोह का मुकदमा चलाया और उन्हें गिरफ्तार किया और समाचार पत्रों के कार्यालयों की तलाशी ली तब 'हिन्दू' चुप नहीं बैठा और उसने इसके खिलाफ पुरजोर आवाज बुलंद की।

यद्यपि श्री कस्तूरीरंगा कांग्रेस के समर्थक थे परन्तु कांग्रेस में भी वे तिलक की विचारधारा के पोषक थे। यहाँ भी वे तिलक के अंध भक्त नहीं थे। जब कभी उन्हें गरमदल की गतिविधियाँ पसन्द नहीं आती थीं तब वे 'हिन्दू' के माध्यम से उनका विरोध करने में नहीं चूकते थे। इस प्रकार अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता को वे सर्वोच्च मानते थे।

"कस्तूरीरंगा ने अपनी संपादन क्षमता से यह सिद्ध कर दिया था कि वे उच्चकोटि के संपादक भी हैं। उनके संपादकीय न्याय की तराजू पर खरे उतरते थे। सही और सच्ची मन की बात कहे बिना वे नहीं रहते थे। इसीलिए 'हिन्दू' की पक्षपात रहित समाचार पत्र के रूप में ख्याति थी। वे काफी अध्ययनशील थे और बहुधा अँगरेजी लेखकों जैसे बूक, मिल, मोर्ले के उद्धरणों को लिखकर अपने तर्कों को मजबूती प्रदान करते थे। मुहावरों का उनके पास भंडार था। इसीलिए उनका लेखन आकर्षक होता था। अपने उप संपादकों के लेखों का संपादन कर उन्हें उपयुक्त शब्दों के साथ ऐसा सुधार कर देते थे कि उप संपादक उनका लोहा मानने लगते थे।"

वे हर घटना को राष्ट्रीय हित की कसौटी पर परखते थे और बेहिचक स्वतंत्र मत व्यक्त कर देते थे। सन 1911 में जब मद्रास के राज्यपाल का कार्यकाल पूरा होने वाला था तब कस्तूरीरंगा ने हिन्दू में एक लेखमाला लिखकर उनके पूरे कार्यकाल का विश्लेषण करते हुए निष्कर्ष प्रस्तुत किया कि सर आर्थर हालेज के प्रशासन के दौरान जिस तरह के दमनकारी कृत्य किए गए उन्हें भारत शासन की दमन की नीति का विस्तार ही कहा जाएगा।

श्री कस्तूरीरंगा ने 'हिन्दू' के माध्यम से देश के भारतीय संपादकों को आत्मसम्मान के साथ पत्रकारिता करने के लिए प्रोत्साहित किया था। दिसम्बर 1911 में जब 'दिल्ली दरबार' का जलसा मनाया गया तब कस्तूरीरंगा को भी दरबार का निमंत्रण प्राप्त हुआ था। परन्तु जब उन्हें यह ज्ञात हुआ कि भारतीय और अँगरेज सम्पादकों में भेद भाव की नीति अपनाई जा रही है और एंग्लो इंडियन संपादकों को जाने-आने का किराया सरकार देगी तथा भारतीय संपादकों को स्वयं के व्यय पर जाना-आना पड़ेगा तब कस्तूरीरंगा ने निमंत्रण को अस्वीकृत कर दिया। यह बात जब मद्रास के राज्यपाल सर थामस कार्माइकल को ज्ञात हुई तब

उन्होंने कस्तूरीरंगा को विश्वास दिलाया कि भेदभाव नहीं बरता जाएगा। तब कहीं कस्तूरीरंगा दिल्ली दरबार जाने को तैयार हुए। इसी दरबार में महाराजा ने बंगाल के 1905 में हुए विभाजन को निरस्त करने की घोषणा की थी।

सन 1910 में रायल कमीशन ने अधिकारों के विकेन्द्रीकरण के लिए भारत में पंचायतों की स्थापना की सिफारिश की थी परन्तु मद्रास सरकार का राजस्व मंडल इस रिपोर्ट को दबा गया था। 'हिन्दू' में कस्तूरीरंगा ने संपादकीय लिखकर राजस्व मंडल को आड़े हाथों लिया। शासन को यह नहीं भाया। उसे लगा कि एक गोपनीय प्रतिवेदन की सिफारिशों पर कैसे लिखा गया? अतः शासन के राजस्व सचिव लायोनेल डेविडसन ने 'हिन्दू' के संपादक को 11 नवम्बर 1915 को जो पत्र लिखा, वह इस प्रकार था -

आपके पत्र के एक तारीख के अंक में 'सिंचाई बोर्ड' शीर्षक लेख प्रकाशित हुआ है, जिसमें बोर्ड की पाँच साल पहले की कार्रवाई का हवाला दिया गया है। मुझे, आपसे यह पूछने का निर्देश हुआ है कि किस कार्रवाई से आपने यह उद्धरण लिया और बताएँ इसका प्रकाशन कहाँ हुआ?

आपका विश्वसनीय
एल. डेविडसन

उपर्युक्त पत्र में समाचार का वह स्रोत बताने को कहा गया है, जहाँ से प्रकाशित समाचार की वस्तुस्थिति ली गई थी। परन्तु पत्रकारिता में यह परिपाटी नहीं है। गलत समाचार का प्रतिवाद किया जा सकता था, परन्तु उस समय के शासक वर्ग की मनःस्थिति तो राजा की मनोवृत्ति से मेल खाती थी। प्रजा तो उतावली और विद्रोह के मूड में थी और स्वतंत्रता से जीना चाहती थी। अतः कस्तूरीरंगा ने राजस्व सचिव डेविडसन को उसके पत्र का माकूल उत्तर 13 नवम्बर 1915 को पत्र लिखकर इस प्रकार दिया -

प्रिय महोदय,

मुझे आपका अर्द्धशासकीय पत्र क्रं. 2794 सी/15-1 मिला और आश्चर्य हुआ कि बोर्ड की संदर्भित कार्रवाई शासन की जानकारी में नहीं है। साथ ही उन अशासकीय व्यक्तियों को भी इसकी जानकारी है, जिनकी बोर्ड की कार्रवाई के विकेन्द्रीकरण आयोग की ग्राम पंचायतों संबंधी रिपोर्ट के अंश में दिलचस्पी है। मैं इस विषय में और अधिक जानकारी देने की स्थिति में नहीं हूँ।

आपका विश्वसनीय
कस्तूरीरंगा अय्यंगार
संपादक

इसके बाद जब डेविडसन से किसी अधिकारी द्वारा गोपनीय कागजात को बता देने की विश्वास भंग की बात उठाई तब कस्तूरीरंगा ने उसका खंडन करते हुए लिखा कि आंग्ल भारतीय पत्र तो आए दिन शासकीय निर्णयों और प्रश्नाधीन विषयों के समाचार छापते रहते हैं - इस पर डेविडसन फिर चुप हो गए।

जब प्रथम महायुद्ध अपने निर्णायक दौर में था - तब ब्रिटिश सूचना मंत्री लार्ड बावरब्रुक ने ब्रिटिश साम्राज्य के प्रमुख पत्रकारों को यूरोप में युद्ध की विभीषिका का अवलोकन करने के लिए बुलाया। भारत में अगस्त 1918 में 5 सम्पादकों जे.ए. सेण्टब्रुक, 'द इंग्लिशमेन' - कोलकाता के सम्पादक, एस. कस्तूरीरंगा अय्यंगार 'हिन्दू' - चेन्नै के सम्पादक, हेमेन्द्र प्रसाद घोष 'बसुमती' - कोलकाता के सम्पादक, गोपालकृष्ण देवधर 'ज्ञान प्रकाश' पुणे के सम्पादक और महबूब आलम 'पैसा' अखबार लाहौर के संपादक को बुलाया गया था। उधर ये सम्पादक इंग्लैण्ड जा रहे थे और इधर भारत के चार राष्ट्रीय विचारधारा के समाचार पत्रों का ब्रिटेन में प्रवेश प्रतिबंधित कर दिया था। ये अखबार थे - 'हिन्दू', एनीबीसेण्ट का 'न्यू इण्डिया', 'बाम्बे क्रानिकल' और 'अमृत बाजार पत्रिका'।

ऐसे अनेक प्रकरण हैं जब देश के राष्ट्रीय समाचार पत्रों और अनेक संपादकों ने अँगरेजी शासन और उनके अधिकारियों को प्रजातांत्रिक तरीकों से बाध्य किया और झुकाया। 13 अप्रैल 1919 को जलियाँवाला बाग कांड हुआ। अमृतसर में जनरल डायर की अराजकता का नंगा नाच देख कर सभी दंग रह गए। सभी समाचार पत्रों पर

कड़ी सेंसरशिप लगा दी गई ताकि वास्तविकता को छिपाया जा सके।

पं. मदनमोहन मालवीय की अध्यक्षता में 20 अप्रैल, 1919 को मुंबई में कांग्रेस कमेटी की बैठक हुई और विदेश सचिव एवं वायसराय को भेजने के लिए एक प्रतिवेदन तैयार करने के उद्देश्य से एक उपसमिति गठित की गई। घटना की सही जानकारी प्राप्त करने के उद्देश्य से देश के प्रमुख संपादकों ने पंजाब के मुख्य सचिव को एक तार भेजा। इनमें सुरेन्द्र बैनर्जी, संपादक 'बंगाली', एनीबीसेन्ट संपादक 'न्यू इंडिया', मतिलाल घोष संपादक 'अमृत बाजार पत्रिका', एस.के.आर. अय्यंगार संपादक 'हिन्दू', सी.वाय. चिंतामणि संपादक 'लीडर' एवं सैयद हुसैन संपादक 'इण्डिपेण्डेट' शामिल थे।

तार में लिखा गया - ''हम, अधोहस्ताक्षरकर्ता श्री सी. एफ. एण्ड्रूज को पंजाब प्रवास के लिए नियत करते हैं, जो भारतीय प्रेस को उस राज्य की वास्तविक दशा पर प्रतिवेदन देंगे। चूँकि पंजाब के हालात का कोई अशासकीय प्रतिवेदन उपलब्ध नहीं है, खास तौर से मार्शल ला प्रशासन के विशेष सन्दर्भ में। हमारा विश्वास है कि पंजाब सरकार हमारे प्रतिनिधि को प्रान्त के दौरे की अनुमति प्रदान करेगी और जाँच कार्य के लिए सभी आवश्यक सुविधाएँ उपलब्ध कराएगी।'' परन्तु एण्ड्रूज को पंजाब प्रवेश की अनुमति देना तो दूर रहा, एक आदेश जारी कर उनके प्रवेश पर ही प्रतिबंध लगा दिया गया। पूरे देश में रोष व्याप्त था। इम्पीरियल लेजिस्लेटिव कौन्सिल से भारतीय सदस्य इस्तीफा दे रहे थे। जगह-जगह बैठकें आयोजित की जा रही थीं। चेन्नै में भी विरोध में आम सभा हुई। इस आम सभा में 'हिन्दू' के सम्पादक कस्तूरीरंगा ने एक गैर पंजीकृत समाचार पत्र पर 'सत्याग्रही' की प्रतियाँ प्रकाशित कराकर अँगरेजी, तमिल और तेलुगु भाषाओं में हस्ताक्षर के साथ नीलाम करायीं।

पाँच मई को महाजन सभा हाल चेन्नै में फिर एक आमसभा हुई जिसे लाहौर से आए श्री गोवर्धनदास ने सम्बोधित कर पंजाब की वस्तुस्थिति से जनता को अवगत कराया। 'हिन्दू' ने श्री गोवर्धनदास का पूरा भाषण छापा और 8 मई को एक संपादकीय लिखा। मद्रास सरकार तो 'हिन्दू' और उसके संपादक से खफा थी। उसने 'हिन्दू' का संपादकीय और आमसभा के समाचार को पर्याप्त आधार मानकर 'हिन्दू' से जमानत जमा करने को कहा। सिटी मजिस्ट्रेट ने 'हिन्दू' से 2000/-रुपए जमानत जमा करने का आदेश दिया। मजे की बात यह थी कि प्रेस एक्ट में ऐसा कोई प्रावधान नहीं था कि जमानत जमा करने के आदेश के खिलाफ अपील की जा सके। अपील तभी हो सकती थी जब जमानत की रकम राजसात कर ली जाए। जमानत जमा कराने के आदेश की भी तीव्र प्रतिक्रिया हुई। गांधीजी ने 'यंग इंडिया' में और ऐनीबीसेंट ने 'न्यू इंडिया' में इसके खिलाफ लिखकर जमानत माँगने के आदेश का प्रतिरोध किया।

'हिन्दू' से जमानत जमा करने के आदेश के बाद तमिल दैनिक 'स्वदेश मित्रम' से 2,000 रुपये की जमानत जमा करने को कहा गया क्योंकि इस समाचार पत्र ने दो पुस्तिकाएँ प्रकाशित की थीं जिन्हें सरकार ने आपत्तिजनक माना और एक अन्य तमिल समाचार पत्र 'हिन्दू नेशन' से 1000 रुपए की जमानत जमा करने को कहा गया क्योंकि उसमें प्रकाशित एक लेख को आपत्तिजनक समझा गया। इसके पूर्व 'न्यू इंडिया' और 'देश भक्तम' से ऐसी जमानत माँगी जा चुकी थी।

इसी दौरान सरकार ने मोन्टागु चैम्स फोर्ड, जिन्हें मोण्ड फोर्ड सुधार कहा गया, की तैयारी की। सुधार की बातें तो सद्भावना के वातावरण में ही संभव थीं, अतः सरकार ने सामान्य क्षमादान की घोषणा कर जिन समाचार पत्रों से प्रेस एक्ट के तहत जमानत की राशि जमा कराई थी, उन सभी को उनकी राशि लौटा दी।

प्रथम विश्वयुद्ध और उसके बाद असहयोग

आन्दोलन के दौरान 'हिन्दू' की प्रसार संख्या बढ़कर 17000 प्रतियों तक पहुँच चुकी थी। बढ़ी हुई माँग के कारण हिन्दू के कार्यालय और प्रेस का विस्तार जरूरी था। अतः मद्रास में सर्वप्रथम 'हिन्दू' ने रोटरी प्रिंटिंग मशीनें लगाई। आधुनिकतम कम्पोजिंग मशीनें भी लगाई गईं। कवरेज को प्रभावशील बनाने के लिए समाचारों को प्रेस टेलीग्राम से बुलाने की व्यवस्था हुई। नए केन्द्र खुले और मुद्रित समाचार पत्र की प्रतियों को पाठकों तक शीघ्र पहुँचाने की व्यवस्था को चुस्त किया गया।

जिस प्रकार पूर्व में घोष बन्धुओं का सर्वाधिक प्रसारित राष्ट्रीय दैनिक 'अमृत बाजार पत्रिका' कोलकाता था उसी प्रकार चेन्नै में श्री कस्तूरीरंगा के 'हिन्दू' का स्थान था। यह पत्र कभी भी अपनी राष्ट्रहित की नीति से हटा नहीं, चाहे उसे कितनी भी सताने की कोशिशें की गई हों।

कस्तूरीरंगा ने अपनी संपादन क्षमता से यह सिद्ध कर दिया था कि वे उच्चकोटि के संपादक भी हैं। उनके संपादकीय न्याय की तराजू पर खरे उतरते थे। सही और सच्ची मन की बात कहे बिना वे नहीं रहते थे। इसीलिए 'हिन्दू' की पक्षपात रहित समाचार पत्र के रूप में ख्याति थी। वे काफी अध्ययनशील थे और बहुधा अँगरेजी लेखकों जैसे बूक, मिल, मोर्ले के उद्धरणों को लिखकर अपने तर्कों को मजबूती प्रदान करते थे। मुहावरों का उनके पास भंडार था। इसीलिए उनका लेखन आकर्षक होता था। अपने उप संपादकों के लेखों का संपादन कर उन्हें उपयुक्त शब्दों के साथ ऐसा सुधार कर देते थे कि उप संपादक उनका लोहा मानने लगते थे। कार्यालय में न उनका भय था न आतंक। सभी उन्हें उनकी क्षमता के वशीभूत होकर आदर करते थे। उनमें एक और अच्छा गुण था। वे अपने मातहत कर्मचारियों को उनकी बात कहने की पूरी छूट देते थे चाहे कर्मचारियों का मत हिन्दू की नीति के विपरीत ही क्यों न हो। वे हमेशा परिवर्तनशील रहे और मस्तिष्क कभी भी जड़ नहीं रहा।

श्री कस्तूरीरंगा के सम्बन्ध देश के सभी सम्मानित लेखकों से बहुत मधुर थे। वे 'हिन्दू' में उनके लेखों को प्रमुखता से प्रकाशित करते थे। सन 1923 के अन्तिम माहों में संत निहालसिंह ने 'हिन्दू' में 'आजकल का हैदराबाद' शीर्षक से एक लेखमाला लिखी जिसमें रियासत हैदराबाद के प्रशासन और नीतियों का आलोचनात्मक सजीव वर्णन प्रस्तुत किया गया है। इन लेखों से हैदराबाद के निजाम खफा हो गए और 19 सितम्बर 1923 को फरमान जारी कर हैदराबाद रियासत में 'हिन्दू' का प्रवेश ही बन्द कर दिया। इस घटना से 'हिन्दू' विचलित नहीं हुआ। इस प्रकार कस्तूरीरंगा ने अपने लेखक का सम्मान बढ़ाते हुए लेखों में व्यक्त स्वतंत्र विचारों का पक्ष लेते हुए उनके प्रकाशन को उचित ही ठहराया और राजाओं और उनके सलाहकारों की बुद्धि पर तरस खाया।

जब वे बीमार रहने लगे थे तब अधिकतर घर से ही 'हिन्दू' के मार्गदर्शन का कार्य करते थे। हार्निया का आपरेशन होने के बाद वे काफी कमजोर हो गए थे। परन्तु दिसम्बर के प्रारम्भ में उनका दुबारा आपरेशन किया गया। इसके बाद उनकी तबियत बिगड़ती ही गई और 12 दिसम्बर 1923 को उनका निधन हो गया। उनके साथ दक्षिण भारत की राष्ट्रीय पत्रकारिता के एक युगपुरुष का अंत हो गया। परन्तु तब तक पौधा पेड़ का स्वरूप ले चुका था। जब श्री कस्तूरीरंगा का निधन हुआ तब 'हिन्दू' की प्रसार संख्या सत्रह हजार थी जो उस समय के हिसाब से काफी अधिक थी।

श्री कस्तूरीरंगा ने पूरे देश को एकता के सूत्र में बाँधते हुए जनजागरण के लिए बहादुरी से लड़ाई लड़कर पत्रकारिता के मानदण्ड स्थापित किए, जिनका अनुसरण करते हुए 'हिन्दू' आज भी पत्रकारिता और देश के निर्माण में हाथ बँटा रहा है।

❑❑

विश्लेषण

पूर्व-भारत की हिन्दी पत्रकारिता

■ डा. कृपाशंकर चौबे

कोलकाता महानगर न सिर्फ देश की सांस्कृतिक राजधानी रहा है, अपितु अहिन्दी भाषी क्षेत्र होने के बावजूद यहाँ हिन्दी पत्रकारिता और साहित्य सृजन की अत्यंत गौरवशाली परंपरा रही है। आजादी के ठीक बाद कोलकाता में हिन्दी का सर्वाधिक प्रसारित हिन्दी दैनिक समाचार पत्र था 'विश्वमित्र'। बाबू मूलचंद अग्रवाल ने सन 1917 में इसे निकाला था। तब से वह निरंतर निकल रहा है। बाबू मूलचंद अग्रवाल ने आत्मकथा में लिखा है, ''सन 1917 के दिसंबर में कलकत्ते में कांग्रेस का अधिवेशन होनेवाला था। यह उपयुक्त समय नए हिन्दी दैनिक के प्रकाशन के लिए समझ लिया गया।''[1] दो हजार रुपये कर्ज लेकर कलकतिया फेस के हिन्दी टाइप का आर्डर दिया गया। प्रवेशांक तो निकला और उस पर नाम था 'विश्वामित्र'।[2] शुभचिंतकों ने सलाह दी कि 'विश्वामित्र' ठीक नहीं। इस पर बदलकर 'विश्वमित्र' कर दिया गया।[3] 'विश्वमित्र' के निकलने का भी एक इतिहास है। बाबू मूलचंद अग्रवाल सन 1914 में इलाहाबाद से बीए करके जब कोलकाता आए तो उन्होंने अपने सहपाठी कुँवर गणेश प्रसाद को 'हिन्दी बंगवासी' में सहायक संपादक के रूप में काम करते हुए देखा। उन्हें देखकर मूलचंद जी के मन में भी पत्रकार बनने की लालसा उत्पन्न हो गई। आरंभ में अम्बिका प्रसाद वाजपेयी के सौजन्य से मूलचंद जी को अनुवाद कार्य मिला। बाद में अग्रलेख लिखने का भी अवसर उन्हें गणेश प्रसाद ने दिलाया। उसके बाद मूलचंद अग्रवाल ने स्वयं अखबार निकालने का निश्चय किया और निकाला। दुनिया तब प्रथम विश्वयुद्ध के प्रभाव में आ गई थी। मूलचंद जी ने मातासेवक पाठक के सहयोग से सुबह-सुबह प्रकाशित अँगरेजी समाचार पत्रों की खबरों का अनुवाद तीसरे प्रहर प्रकाशित होने वाले 'विश्वमित्र' में देना आरंभ किया। हिन्दी के अन्य पत्र चूँकि वे खबरें दूसरे दिन प्रकाशित करते थे, अतः 'विश्वमित्र' चल निकला।

बाबू मूलचंद अग्रवाल मिशन की पत्रकारिता के हिमायती थे, इसलिए स्वाधीनता संग्राम का खुलकर समर्थन करते थे और अँगरेजों की आलोचना करने से नहीं चूकते थे। सन 1922 में प्रिंस आफ वेल्स के आगमन पर जनता ने जबर्दस्त प्रदर्शन किया था। उस प्रदर्शन के पक्ष में 'विश्वमित्र' ने लिखा तो बाबू मूलचंद अग्रवाल को गिरफ्तार कर लिया गया। उसका विवरण उन्होंने 'पत्रकार की आत्मकथा' पुस्तक में दिया है। यह किताब बाबू मूलचंद अग्रवाल की आत्मकथा है, जो सन 1944 में प्रकाशित हुई थी। किताब में एक स्वतंत्र अध्याय का शीर्षक ही है : '1922 की जेल यात्रा।' इसमें उन्होंने लिखा है, ''राजद्रोह के अभियोग में गिरफ्तारी हुई थी। 'विश्वमित्र' के तीन अग्रलेख गिरफ्तारी के आधार बताए गए थे। पत्र का संपादक, मुद्रक और प्रकाशक उन दिनों मैं ही था।''[4] इसी अध्याय में वे लिखते हैं, शहर के सभी गणमान्य नेता और राष्ट्रकर्मी गिरफ्तार हो चुके थे और अलीपुर सेंट्रल जेल में विराजमान थे। वहाँ पर थे - देशबंधु चित्तरंजन दास, सुभाषचंद्र बोस, अबुल कलाम आजाद, भारत मित्र संपादक

लक्ष्मण नारायण गर्दे, स्वतंत्र संपादक अम्बिकाप्रसाद वाजपेयी।[5] मूलचंद बाबू लिखते हैं, ''जब मुझे अलीपुर सेंट्रल जेल पहुँचाया गया तो उच्च स्वर में सबने आइए, आइए, कहकर स्वागत किया और उस टोली में मैं जा मिला।''[6] मूलचंद बाबू को तब एक साल की सजा जेल में काटनी पड़ी थी। बाबू मूलचंद अग्रवाल जेल से रिहा हुए तो रंगीन कागज के आवरण में सामयिक चित्रों के साथ दो रुपये वार्षिक मूल्य पर 'विश्वमित्र' साप्ताहिक का प्रकाशन भी प्रारंभ किया। विज्ञापन जुटाने के लिए बाबू मूलचंद अग्रवाल ने एंग्लो इंडियन महिला को नियुक्त किया। उससे विज्ञापन की संख्या बढ़ी और आमदनी भी। सन 1940 में मूलचंद बाबू ने हेमचंद्र जोशी और इलाचंद्र जोशी के संपादन में 'विश्वमित्र' मासिक का प्रकाशन प्रारंभ किया। दैनिक और साप्ताहिक 'विश्वमित्र' पहले से ही निकल रहे थे। 'विश्वमित्र' मासिक को जोशी बंधुओं के व्यक्तित्व तथा पारिश्रमिक देने की नीति के कारण तमाम लेखकों का रचनात्मक सहयोग मिलने लगा। सन 1941 में 'विश्वमित्र' इस अवस्था में पहुँच गया कि उसका प्रकाशन कोलकाता के अलावा मुंबई और दिल्ली से भी होने लगा। बाद में कानपुर और पटना से भी निकलने लगा। वह हिन्दी का पहला दैनिक था जो एक साथ पाँच शहरों से निकलता था। आज केवल कोलकाता से वह जरूर निकलता है और प्रसार की दृष्टि से बहुत पीछे है, किंतु उसका इतिहास बहुत गौरवपूर्ण रहा है। आजादी की लड़ाई में उसके योगदान को समझने के लिए उसमें प्रकाशित दो टिप्पणियाँ कुंजी का काम कर सकती हैं। मासिक 'विश्वमित्र' के मार्च 1942 के अंक में संपादक ने लिखा था, ''भारतीय महत्वाकांक्षाओं की कुँजी ब्रिटिश राजनीतिज्ञों के हाथ में नहीं है, हमारे ही हाथ में है।'' इसी तरह मासिक 'विश्वमित्र' के दिसंबर 1941 के अंक में बाबू राम मिश्र ने लिखा, ''देवली कैंप के बंदियों के अनशन को 28 दिन हो रहे हैं। यह भीषण व्रत क्या है? निराहार रहकर जठराग्नि में शनैः शनैः अपने शरीर के रक्तमांस की आहुति स्वयं देना कितना कठिन है। इसका कष्ट उसे कैसे अनुभव हो, जिसका पेट तना हुआ है। उसके साथ जब सत्ता और अधिकार का नशा हो, तब भला यह कौन अनुभव करे कि ये मिट्टी के पुतले भी मनुष्य हैं, उनकी भी एक दुनिया है, जो आज हृदय पर पत्थर रखकर, आँखों में आँसू भरकर देवली का समाचार जानने के लिए व्यग्र रहती है। इस निष्ठुरता की भी भला कोई सीमा है?'' 'राष्ट्रीय आंदोलन और विश्वमित्र' शीर्षक लेख में रामेश्वर मिश्र 'अनुरोध' ने ठीक लिखा है, ''विश्वमित्र' राष्ट्रीयता, लोकतंत्र, स्वतंत्रता और समता का पक्षधर और पोषक था।''[7] बाबू मूलचंद अग्रवाल और एक अन्य मारवाड़ी मित्र को याद करते पांडेय बेचन शर्मा 'उग्र' ने 'सन्मार्ग' के 26 नवंबर 1948 के अंक में लिखा था, बजरंगलाल लोहिया अधिक मारवाड़ी हैं, बनिस्बत मूलचंद अग्रवाल के। उस लेख में उग्र जी ने कोलकाता के अपने पत्रकार जीवन को याद किया है। अम्बिका प्रसाद वाजपेयी ने बाबू मूलचंद अग्रवाल को हिन्दी का लार्ड नार्थ क्लिफ कहा था।

स्वाधीनता मिलने के आठ महीने बाद 18 अप्रैल 1948 को कोलकाता से 'सन्मार्ग' निकला। बनारस से वह पहले ही निकलता था। स्वामी करपात्री जी महाराज की इच्छापूर्ति के लिए छोटेलाल कानोड़िया ने बनारस से 24 जनवरी 1946 को यह पत्र निकाला था। राम अवतार गुप्त वहाँ एकाउंटेंट थे। बाद में प्रेस का काम भी देखने लगे और एक साल के भीतर ही प्रेस मैनेजर बना दिए गए। कोलकाता संस्करण का घाटा बढ़ने लगा तो राम अवतार गुप्त को स्थिति सँभालने के लिए बनारस से कोलकाता स्थानांतरित किया गया। सन 1950 में उन्हें 'सन्मार्ग' का निदेशक बनाया गया और 1980 के दशक में उन्होंने ही 'सन्मार्ग' का अधिग्रहण कर लिया। आरंभ में 'सन्मार्ग' के कोलकाता संस्करण की दो हजार प्रतियाँ छपती थीं। सन 1951 में कोलकाता से

'नवभारत टाइम्स' भी छपने लगा और तेजी से बढ़ने लगा। हरिशंकर द्विवेदी उसके संपादक थे। कोलकाता से 'लोकमान्य' सन 1930 से ही निकल रहा था। 'लोकमान्य' के अलावा 'विश्वबंधु' भी छपता था। सन 1953 में 'नवभारत टाइम्स' बंद हो गया तो इसे 'सन्मार्ग' ने अवसर के रूप में इस्तेमाल किया। वह पाँच-छह हजार बिकने लगा। सत्तर का दशक शुरू होते ही वह 22-23 हजार छपने लगा और सन 1972 खत्म होते-होते मल्टीकलर में 35-36 हजार छपने लगा। 'विश्वमित्र' तब भी नंबर वन था, किंतु इमरजेंसी से लेकर जनता सरकार बनने के दौरान हीरा लाल चौबे ने 'सन्मार्ग' के दिल्ली प्रतिनिधि के रूप में ऐसी खबरें लिखीं कि 'सन्मार्ग' नंबर वन हो गया। वह कोलकाता में एक लाख से अधिक बिकने लगा। 'सन्मार्ग' को स्थापित करने में उसके संपादकों का बड़ा योगदान रहा। गंगाशरण मिश्र 'सन्मार्ग' के वाराणसी और कोलकाता दोनों संस्करणों के आरंभिक दौर में करीब दस वर्ष तक संपादक रहे।[8] 'सन्मार्ग' का संपादक रहते हुए उन्होंने उसके विकास के लिए प्रयास किए और कई बार आर्थिक संकट से उबारने में भी मदद की।[9] डा. कृष्णबिहारी मिश्र ने 'हिन्दी पत्रकारिताः बंगीय भूमिका' शीर्षक लेख में लिखा है, ''18 अप्रैल 1948 को प्रकाशित दैनिक 'सन्मार्ग' के प्रति प्रबुद्ध वर्ग का अधिक आकर्षण रहा। विशेषतः जब 'सन्मार्ग' पं. अनंत मिश्र के संपादन में निकलता था, उसका राजनीतिक ही नहीं, साहित्यिक स्तर भी उन्नत हुआ करता था।''[10]

विश्वंभर नेवर ने 11 फरवरी 1972 को कोलकाता से सांध्य दैनिक 'छपते-छपते' निकाला। बाद में उसका प्रातःकालीन संस्करण भी छपने लगा। तब कोलकाता में हिन्दी पत्रकारों को शासन की तरफ से मान्यता देने में हीला-हवेली की जाती थी। किसी आयोजन में प्रेस कार्ड की जगह अतिथि का कार्ड दे दिया जाता था। इसका 'छपते-छपते' के संपादक विश्वंभर नेवर ने पुरजोर विरोध किया। उन्होंने प्रेस कार्ड जारी होने तक प्रशासन से लड़ाई जारी रखी।

आज कोलकाता में विधानसभा से लेकर राज्य सरकार के एक्रिडिशन कार्ड हिन्दी पत्रकारों को आसानी से सुलभ हो जाते हैं तो इसके पीछे नेवर जी के संघर्ष का बड़ा योगदान है। 'छपते-छपते' विगत 45 वर्षों से निकल रहा है, फिर भी उसकी प्रसार संख्या कम है। लेकिन उसके दीपावली विशेषांक की पूरे देश में चर्चा रही है। उसका दीपावली विशेषांक तीन दशकों से निरंतर निकल रहा है, जिसमें देशभर के हिन्दी लेखक विभिन्न विधाओं में लिखते हैं। उसका संपादन श्रीनिवास शर्मा करते हैं। 'छपते-छपते' दैनिक का 24 घंटे का 'ताजा टीवी' चैनल भी है जो कोलकाता से हिन्दी का एकमात्र सैटलाइट चैनल है। उसमें विश्वंभर नेवर के सागर मंथन कार्यक्रम की यथेष्ठ चर्चा रही है। चैनल का प्रभार विश्वंभर नेवर के पुत्र विपिन तथा विक्रम नेवर संभालते हैं। 'छपते-छपते' समूह पत्रकारिता और अन्य मुद्दों पर कई राष्ट्रीय संगोष्ठियाँ भी आयोजित करता रहा है जिसमें राष्ट्रपति, प्रधानमंत्री, मुख्यमंत्री, राज्यपाल भी शिरकत करते रहे हैं। विश्वंभर नेवर भारतीय प्रेस परिषद के सदस्य थे। उनके पुत्र विपिन नेवर अभी भारतीय प्रेस परिषद के सदस्य हैं।

28 अगस्त 1977 को आनंद बाजार पत्रिका समूह ने कोलकाता से हिन्दी साप्ताहिक 'रविवार' का प्रकाशन प्रारंभ किया। संपादक का काम सुरेंद्र प्रताप सिंह देखते थे किंतु प्रिंटलाइन में एमजे अकबर का नाम जाता था। कुछ अंकों के बाद संपादक के रूप में सुरेंद्र प्रताप सिंह का नाम जाने लगा। 'रविवार' का पहला अंक 28 अगस्त 1977 को निकला था, जिसकी आमुख कथा थी - 'रेणु का हिंदुस्तान।' वह पत्रिका राष्ट्रीय स्तर पर समाचार पत्रिका के रूप में चर्चित हुई। पत्रिका ने राजनीतिक पत्रकारिता तथा खोजी पत्रकारिता के नए मानदंड स्थापित किए। सुरेंद्र प्रताप सिंह ने

'रविवार' का लगभग दस वर्षों तक संपादन किया। वे जब 'नवभारत टाइम्स' में चले गए तो 'रविवार' में उनके उत्तराधिकारी बने उदयन शर्मा। सन 1990 में 'रविवार' बंद हो गया। 'रविवार' के कारण देश में आनंद बाजार पत्रिका समूह के मालिक अवीक सरकार को जो स्वीकृति और प्रतिष्ठा मिली, उससे वे हिन्दी की व्याप्ति और महत्व से परिचित हुए और इसीलिए आगे चलकर उन्होंने हिन्दी में एक राष्ट्रीय टीवी चैनल एबीपी न्यूज को प्रारंभ किया।

सन 1991 में 'जनसत्ता' का कोलकाता संस्करण शुरू हुआ। उसके प्रवेशांक की विशेष संपादकीय का शीर्षक प्रभाष जोशी ने दिया था - 'चालो वाही देस।' यानी पत्रकारिता 'देस' को देखे। 'जनसत्ता' ने 'देस' से संवाद बनाया। पत्रकारिता बगैर संवाद के चल ही नहीं सकती और उसकी सार्थकता इस बात में है कि वह पाठकों से कितना जीवंत संवाद रखती है। 'जनसत्ता' ने बंगाल के प्रवासी हिन्दी समाज के साथ ही बांग्ला समाज के साथ भी जीवंत संवाद कायम किया।

समाज में जहाँ भी अनौचित्य दिखता, 'जनसत्ता' उसे टोकता। उसी के समानांतर बांग्ला साहित्य-कला-संस्कृति के कई सबल पक्षों को उसने हिन्दी पाठकों के समक्ष प्रस्तुत किया। महाश्वेता देवी 'जनसत्ता' में 'मैं जो देखती हूँ' शीर्षक स्तम्भ लिखती थीं। 'जनसत्ता' बांग्ला के साथ ही हिन्दी भाषी संस्कृतिकर्मियों की गतिविधियों को प्रमुखता से प्रकाशित करने लगा। बंगाल के हिन्दी पाठकों ने देखा कि पहली बार 'जनसत्ता' के रविवारीय अंक 'सबरंग' की कवर स्टोरी कभी प्रतिभा अग्रवाल पर, तो कभी श्यामानंद जालान पर, कभी नागार्जुन तो कभी केदारनाथ अग्रवाल पर, कभी राम विलास शर्मा तो कभी नामवर सिंह पर, कभी कृष्णा सोबती तो कभी विद्यानिवास मिश्र पर, कभी महाश्वेता देवी तो कभी पंडित जसराज पर तो कभी उषा गांगुली पर छप रही है। बंगाल के हिन्दी पाठकों ने देखा कि नागार्जुन से लेकर त्रिलोचन और कृष्ण बिहारी मिश्र के वक्तव्य 'जनसत्ता' के पहले पृष्ठ पर सचित्र प्रकाशित होते हैं। 'जनसत्ता' ने सिर्फ साहित्य-कला-संस्कृति ही नहीं, राजनीति, शिक्षा, स्वास्थ्य, पर्यावरण, स्त्री-विमर्श, दलित और अल्पसंख्यकों के समसामयिक सवालों को भी उम्दा तरीके से उठाया। मदर टेरेसा और उनकी संस्था मिशनरीज ऑफ चैरिटी से जुड़ी अन्तरराष्ट्रीय महत्व की कई खबरें पहली बार 'जनसत्ता' में छपीं, बाद में बांग्ला अखबारों में आईं। बंगाल में रहने वाले हिन्दी के सभी वरिष्ठ और नवोदित लेखकों की रचनाएँ 'जनसत्ता' ने छापीं। अलका सरावगी का उपन्यास 'कलिकथा वाया बाईपास' सबसे पहले 'जनसत्ता' कोलकाता के रविवारीय अंक 'सबरंग' ने ही धारावाहिक छापा था। प्रभा खेतान के दो-दो उपन्यास 'सबरंग'

> **"प्रचार के नाम पर संस्कार का संहार असह्य अनाचार है। जान पड़ता है, यह भाषा-संस्कार के बदले भाषा-संहार का युग है। पत्रकारों का न इधर ध्यान है, न इसमें अनुराग ही। दोषी वास्तव में हम संपादक ही हैं, जो अपने पत्रों या पत्रिकाओं के माध्यम से भाषा के पवित्र क्षेत्र में भ्रष्टता फैलाते हैं।"**
>
> **- आचार्य शिवपूजन सहाय**

ने धारावाहिक छापे तो मधु कांकरिया की रचनाएँ भी। 6 दिसम्बर 1992 को बाबरी मस्जिद ढहाए जाने की घटना के विरोध में 'जनसत्ताश के कोलकाता संस्करण की ही पहल पर डर. कृष्ण बिहारी मिश्र की अगुवाई में बुद्धिजीवियों की सभा टांटिया हाईस्कूल में हुई थी जिसमें चन्द्रबली सिंह, इस्राइल, अरुण महेश्वरी जैसे जनवादी लेखक भी शरीक हुए थे। 6 दिसम्बर की घटना के बाद 'जनसत्ताश, कोलकाता की टीम बंगाल में हर संवेदनशील जगह पर किस तरह तैनात हुई थी, बेलियाघाटा में दंगे के भय से भागे लोगों को ष्ण बिहारी मिश्र की अगुवाई वाली साउथ बेलेघाटा वेलफेयर सोसायटी ने कैसे आश्रय दिया था, ऐसी अनेक कहानियाँ 'जनसत्ता' के कोलकाता संस्करण के तत्कालीन अंकों के पन्नों में दर्ज हैं। 'जनसत्ता' कोलकाता में 'सन्मार्ग' के बाद दूसरा सबसे ज्यादा बिकनेवाला अखबार हो गया।

31 अक्टूबर 2000 को 'प्रभात खबर' का कोलकाता संस्करण प्रारंभ हुआ। कोलकाता में हरिवंश की यह दूसरी पारी थी। प्रभाष जोशी और 'जनसत्ता' जिस तरह एक-दूसरे के पर्याय बने अथवा राहुल बारपुते और 'नई दुनिया' एक-दूसरे के पर्याय बने, उसी तरह हरिवंश और 'प्रभात खबर' भी एक-दूसरे के पर्याय बने। हरिवंश और 'प्रभात खबर' कैसे एक-दूसरे के पर्याय बने, इसकी पूरी कहानी 'सफरनामा एक अखबार का 25 वर्षों का' नामक 656 पृष्ठों की किताब में दर्ज है। हरिवंश सन 1989 से 2016 तक 'प्रभात खबर' के प्रधान संपादक थे। सन 1984 से अक्टूबर 1989 तक वे आनंद बाजार पत्रिका समूह द्वारा कोलकाता से प्रकाशित 'रविवार' साप्ताहिक में सहायक संपादक रहे थे। वहाँ वे अक्टूबर 1989 तक रहे। फिर महानगरों की पत्रकारिता और बड़े घरानों के बड़े अखबारों - संस्थानों को छोड़कर उन्होंने एक छोटे शहर रांची में प्रायः बंद हो चुके अखबार 'प्रभात खबर' में प्रधान संपादक के रूप में काम शुरू किया। नए प्रयोगों और जन सरोकारों से जुड़कर हरिवंश ने न सिर्फ 'प्रभात खबर' को स्थापित किया, अपितु पत्रकारिता को नया आयाम भी दिया। हरिवंश को पिछले तीन दशकों में युवा संपादकों और पत्रकारों की उम्दा पीढ़ी खड़ी करने का श्रेय भी जाता है। हरिवंश ने 25-30 साल के युवाओं को स्थानीय सम्पादक या सम्पादकीय प्रभारी जैसी जिम्मेदारी देने का जोखिम उठाया। लेकिन जिन युवा पत्रकारों को उन्होंने यह जिम्मेदारी सौंपी, उनमें अधिकतर सफल भी हुए जैसे अनुज कुमार सिन्हा, विजय पाठक, रवि प्रकाश और कौशल किशोर त्रिवेदी। सन 2000 ई. में जब 'प्रभात खबर' का कोलकाता संस्करण प्रारंभ हुआ तो हरिवंश ने ओम प्रकाश अश्क को स्थानीय संपादक बनाया। उनके बाद कौशल किशोर त्रिवेदी कोलकाता संस्करण के संपादकीय प्रभारी बने। त्रिवेदी संप्रति गया संस्करण के स्थानीय संपादक हैं और कोलकाता संस्करण के स्थानीय संपादक संप्रति तारकेश्वर मिश्र हैं। 'सफरनामा एक अखबार का 25 वर्षों का' किताब हरिवंश की संपादन कला और उनके संपादन में अखबार की रजत भूमिका का अवलोकन है। इस यात्रा में 'प्रभात खबर' के कोलकाता संस्करण की डेढ़ दशक की यात्रा भी शामिल है। इस किताब को प्रकाशन संस्थान, दिल्ली ने प्रकाशित किया है। पत्रकार निराला द्वारा संपादित इस किताब में देशभर के लेखकों-पत्रकारों और विख्यात शख्सियतों के डेढ़ सौ लेख संकलित हैं। इस किताब में संकलित राजेंद्र यादव ने 'दबे-कुचले की आवाज' शीर्षक अपने लेख में लिखा है, ''संपादक का महत्व अखबार में सबसे ज्यादा होता है। 'प्रभात खबर' को ही लें, अगर हरिवंश जी नहीं हों तो 'प्रभात खबर' का क्या रूप होगा?''[11] 'आदिवासियों की धड़कन का आईना' शीर्षक लेख में 'साक्षात्कार' के जनवरी-मार्च 2003 के अंक में छपे शिवमंगल सिंह सुमन के पत्रों को उद्धृत किया गया है। 22 जनवरी 1990 के पत्र में सुमन जी ने लिखा है,

''प्रभात खबर' के उच्च स्तरीय स्वरूप से मैं बहुत प्रभावित हुआ हूँ। भारतवर्ष के हिन्दी दैनिक समाचार पत्रों में निस्संदेह उसे शीर्षस्थ कोटि में रखा जा सकता है।''[12] 21 जून 1991 को लिखे दूसरे पत्र में सुमन जी ने लिखा है, ''प्रभात खबर' छपाई, सफाई और उच्चस्तरीय पत्रकरिता के रूप में प्रतिष्ठा प्राप्त कर चुका है।''[13]

कवि त्रिलोचन ने 29 जून 1990 को लिखे पत्र में कहा है, ''आपका 'प्रभात खबर' मैं ध्यान से पढ़ता हूँ और मैं इसको हिन्दी के उत्तम पत्रों में मानता हूँ। आप समाचार देने में भी अद्यतन हैं और महत्व के बाहर के समाचार भी पूरी तरह देते हैं। आपने साहित्यिक अंकों को अच्छे ढंग से निकाला है। आपका रविवारी अंक संग्रहणीय रहता है।''[14] रामकुमार वर्मा ने लिखा है, ''प्रभात खबर' के कुछ अंक पढ़ कर ज्ञात हुआ कि यह प्रथम श्रेणी का पत्र है और इसके द्वारा प्रकाशित सूचनाएँ विश्वस्त और प्रामाणिक हैं।''[15] वाराणसी से एक फरवरी 1990 को लिखे पत्र में काशीनाथ सिंह ने कहा है, ''सबसे अधिक बधाई 'प्रभात खबर' जैसा 'जनसत्ता' के टक्कर का अखबार निकाने के लिए।''[16] इसी लेख से यह भी पता चलता है कि साहित्य समालोचक नामवर सिंह और कवि केदारनाथ सिंह भी मानते हैं कि 'प्रभात खबर' हिन्दी का सर्वश्रेष्ठ दैनिक है।[17] हिन्दी की ख्यातिलब्ध उपन्यासकार महुआ माझी ने लिखा है, "आम जनता 'प्रभात खबर' को अपना लीडर मानती है। हरिवंश जी को हम केवल संपादक के रूप में नहीं जानते, बल्कि वे सुलझे बुद्धिजीवी हैं। उनकी बेबाक टिप्पणी हमें प्रोत्साहित करती है।''[18]

देश के शीर्षस्थ साहित्यकारों की तरह देश के तमाम सुपरिचित पत्रकार भी इसी तरह की राय जाहिर करते हैं। किताब में संकलित अपनी टिप्पणी में राजदीप सरदेसाई ने लिखा है, ''प्रभात खबर' की तरह पत्रकारिता में हम अपनी लक्ष्मण रेखा व ताकत पहचानें, अपने लोकतंत्र में विश्वास करें तो सफल होंगे।''[19] कुलदीप नैयर ने लिखा है, ''मुझे आज अखबारवालों में कमिटमेंट नहीं दिखता, लेकिन 'प्रभात खबर' जरा हटकर है।''[20] बी.जी. वर्गीज ने लिखा है, ''प्रभात खबर' ने क्षेत्रीय अखबार होते हुए भी राष्ट्रीय सरोकार बनाए रखा है।''[21] बी.जी. वर्गीज के लेख का शीर्षक ही है : 'बाजारवाद के दौर में गरीबों की बात करने वाला अखबार'।'' किताब में प्रभाष जोशी की दो टिप्पणियाँ हैं। एक टिप्पणी में 'प्रभात खबर' के संदर्भ में उन्होंने लिखा है, ''हिन्दी पत्रकारिता का भविष्य उज्ज्वल है।''[22]

राम बहादुर राय के लेख का शीर्षक है : क्षेत्रीय पत्रकारिता को एक नई दिशा दी। इसमें वे लिखते हैं, ''प्रभात खबर' और 'जनसत्ता' दोनों लगभग एक ही समय में अस्तित्व में आए। हिन्दी पत्रकारिता की ये दो महत्वपूर्ण घटनाएँ हैं। सन 1983 में 'प्रभात खबर' निकालने का फैसला किया गया, उन्हीं दिनों लंबी जद्दोजहद के बाद और प्रभाष जोशी के आग्रह पर गोयनका ने 'जनसत्ता' निकालने का फैसला किया। 'जनसत्ता' को प्रभाष जोशी का योग्य नेतृत्व मिला। वह एक-डेढ़ साल में ही बड़े अखबारों के मुकाबले नए प्रयोगों के दौर से निकला और सफल हुआ। उन दिनों प्रभात खबर को योग्य नेतृत्व उपलब्ध नहीं था। युवा कांग्रेस के एक बड़े नेता ज्ञानरंजन ने उसे निकाला किन्तु चला नहीं पाए। उसके पाँच-छह साल बाद प्रभात खबर में नेतृत्व परिवर्तन हुआ। जब 'प्रभात खबर' को हरिवंश ने सँभालना शुरू किया तब से वह एक व्यवस्थित अखबार बनने की दिशा में बढ़ने लगा। उसे पिछली छाया से मुक्त होने में थोड़ा वक्त लगा। 'प्रभात खबर' ऊँचाइयाँ चढ़ रहा था, तब 'जनसत्ता' ढलान पर था। 'प्रभात खबर' को अपने क्षेत्र में प्रभावशाली अखबार बनाने के लिए हरिवंश ने उन जगहों पर खुद जाकर समझा, बातचीत की और उसके निष्कर्ष निकाले।''[23] पुण्यप्रसून वाजपेयी ने लिखा है, ''किसी भी संपादक के लिए मुश्किल काम है कि बाजार की स्थितियों के इतर वह पत्रकारिता के

मानदण्डों को इस तरह स्थापित करे जिससे साथ काम करने वाले पत्रकारों में यह अहंकार आ जाए कि वह वाकई पत्रकार है। हरिवंश जी ने इन स्थितियों को समझा-बूझा है, इसलिए उनके संपादक होते हुए जो अखबारी प्रयोग है, वह बहुआयामी है।''[24] पुण्यप्रसून वाजपेयी की दो टिप्पणियाँ किताब में हैं। दूसरी टिप्पणी का शीर्षक है : 'संपादक की निज साधना'। इसमें कहा गया है, ''प्रभात खबर' को बाहर-अंदर जितना मैंने देखा है, उसमें संपादक शब्द पर हरिवंश का नाम मुझे अक्सर ऊपर और बड़ा लगा है, क्योंकि दो दशकों से कोई शख्स बतौर संपादक एक अखबार को जीवन से जोड़ने में लगा हो, वह महज संपादकीय जरूरत नहीं हो सकती।''[25]

यदि देश के जाने-माने साहित्यकार तथा पत्रकार हरिवंश को बड़ा संपादक और उनके संपादन में निकले 'प्रभात खबर' को बड़ा अखबार मानते हैं तो इसलिए कि 'प्रभात खबर' को सदा-सर्वदा यह बोध रहा है कि अखबार पाठकों से बनता है और पाठकों को बनाता है। 'प्रभात खबर' को इसीलिए पाठकों ने बनाया और 'प्रभात खबर' ने भी पाठकों को बनाया।

'प्रभात खबर' ने अपनी पत्रकारिता में चिंतन, विचार और संवाद को सर्वोच्च प्राथमिकता दी। भूमंडलीकरण के गर्भ से जो चिटफंड कंपनियाँ, शेयर बाजार के दलाल और नॉन बैंकिंग कंपनियाँ अचानक अवतरित हुईं, उनकी 'प्रभात खबर' ने जमकर खबर ली। पेड न्यूज के खिलाफ अभियान चलाया। चुनाव आयोग ने चुनावी विज्ञापन की सीमा तय कर दी तो मीडिया ने नायाब तरीके ढूँढ़े। चुनाव लड़ रहे प्रत्याशियों के पक्ष में 'एडवरटोरियल' छापे जाने लगे। हद तो तब हो गई जब एक निर्वाचन क्षेत्र से दस चुनावी प्रत्याशी थे, तो दसों के जीतने संबंधी 'न्यूज आइटम' छपे। पैसे लेकर। प्रत्याशियों ने विज्ञापन के बदले 'न्यूज आइटम' अपने पक्ष में छपवाए। सीधे अखबारों के प्रबंधन, उसके बड़े पत्रकारों ने इन 'प्रचार न्यूज आइटमों' के विज्ञापन दर से पैसे वसूले। चुनाव आयोग की आचार-संहिता-चुनावी प्रचार-विज्ञापन पर खर्च की सीया तय करने की सारी कोशिशें, धरी की धरी रह गयीं। उदारीकृत नई विश्व अर्थव्यवस्था में मीडिया की भूमिका में आए इस परिवर्तन को 'प्रभात खबर' ने मानने से इनकार कर दिया। 'प्रभात खबर' ने चुनावी कवरेज की अपनी आचार संहिता बनाई जिसे विस्तार से इस किताब में जगह दी गई है। किताब के एक खंड में रिपोर्टर्स डायरी दी गई है। कदाचित इन्हीं सबके कारण झारखंड के बाद बंगाल में भी 'प्रभात खबर' तेजी से बढ़ने लगा। दूसरी तरफ 'जनसत्ता' के कोलकाता संस्करण की प्रसार संख्या गिरने लगी और उसकी भी वही दशा हुई जो 'विश्वमित्र' की हुई। 'प्रभात खबर' आज कोलकाता में 'सन्मार्ग' के बाद दूसरा सबसे ज्यादा बिकने वाला अखबार है।

अस्सी के दशक में कोलकाता से हिन्दी दैनिक 'रूपलेखा' (बी.एल. शाह), दैनिक 'लेकिन' (हेमंत बच्छावत) भी निकले, किंतु प्रसार की दृष्टि से वे नगण्य थे। उसके अलावा 'सूत्रकार' और हिन्दी दैनिक 'प्रकाश' भी निकलता रहा। साप्ताहिक के रूप में 'दृष्टि परख' सन 1994 से ही निकल रहा है। जगमोहन जोशी ने कुछ दिनों तक उसे सांध्य दैनिक के रूप में निकाला। फिर उसका प्रातःकालीन संस्करण भी निकाला, पर बात नहीं बनी तो फिर साप्ताहिक के रूप में ही वह निकल रहा है। पहले विश्वमित्र समूह से हर हफ्ते 'सिने एडवांस' निकलता था और खूब बिकता भी था। गीतेश शर्मा ने एक दशक से ज्यादा समय तक साप्ताहिक 'जनसंसार' निकाला। प्रकाश जोशी साप्ताहिक 'संवाद सूत्र' निकालते रहे। ये दोनों साप्ताहिक फिलहाल बंद हैं। कोलकाता से हिन्दी मासिक 'द वेक' का प्रकाशन-संपादन भी पिछले बारह वर्षों से शकुन त्रिवेदी कर रही हैं।

राजेंद्र नारायण वाजपेयी ने दो दिसंबर 2005 को कोलकाता से हिन्दी दैनिक 'भारत मित्र' का

पुनर्प्रकाशन प्रारंभ किया। 'भारत मित्र' 17 मई 1878 को पाक्षिक के रूप में निकला था। दसवें अंक से वह साप्ताहिक हो गया और बाद में दैनिक। छोटेलाल मिश्र, अमृतलाल चक्रवर्ती, बाल मुकुंद गुप्त, लक्ष्मण नारायण गर्दे और अम्बिका प्रसाद वाजपेयी उसके संपादक रहे। 'भारत मित्र' सन 1934 तक निकलता रहा। सात दशकों के उपरांत अम्बिका प्रसाद वाजपेयी के पौत्र राजेंद्र प्रसाद वाजपेयी ने 2005 में कोलकाता से हिन्दी दैनिक के रूप में 'भारत मित्र' का पुनर्प्रकाशन प्रारंभ किया। तब से यानी पिछले बारह वर्षों से वह निरंतर निकल रहा है। संप्रति कोलकाता से 'सन्मार्ग', 'प्रभात खबर', 'जनसत्ता', 'दैनिक जागरण', 'राजस्थान पत्रिका', 'भारत मित्र', 'छपते-छपते', 'राष्ट्रीय महानगर', 'भारत एक नजर', 'समाज्ञा', 'सलाम दुनिया', 'सेवा संसार', 'सूत्रकार', 'प्रकाश' जैसे दैनिक भी निकलते हैं किंतु प्रसार और अंतर्वस्तु की दृष्टि से 'सन्मार्ग' और 'प्रभात खबर' ही क्रमशः पहले और दूसरे नंबर पर हैं।

> **"हिन्दी को विकृत करना भी एक लाक्षणिक प्रयोग है। इसका यह अर्थ नहीं समझना चाहिए कि हिन्दी में अनुचित शब्दों का अनुचित ढंग से प्रयोग करके कोई उस भाषा को बिगाड़ता है। वस्तुतः बिगाड़ता यदि है तो उस जन समूह को जिसकी भाषा हिन्दी है।**
>
> **- आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी**
>
> **थर्मामीटर दूसरों का बुखार इसलिए माप सकता है क्योंकि उसका अपना बुखार नहीं होता। इसी तरह निर्विकार व्यक्ति ही विकार रहित विचार दे सकता है।**
>
> **- आचार्य विनोबा भावे"**

कोलकाता की हिन्दी पत्रकारिता में आए परिवर्तनों को जिन प्रभावों के आइना में समझा जा सकता है, वे हैं - (1) तकनीक का प्रभाव और (2) भूमंडलीकरण का प्रभाव। तकनीकी सुविधा के कारण कोलकाता के सभी हिन्दी दैनिकों की साज-सज्जा में गुणात्मक सुधार आया है किंतु भूमंडलीकरण के दबाव में कोलकाता में मीडिया के स्वरूप और चरित्र में बदलाव आते भी देखा गया। भूमंडलीकरण के गर्भ से जो चिटफंड कंपनियाँ, शेयर बाजार के दलाल और नॉन बैंकिंग कंपनियाँ अचानक अवतरित हुईं, उनकी भूमिका के बारे में बात करें तो बंगाल में 2013 ई. के आरंभ में कोलकाता तथा सिलीगुड़ी से प्रकाशित हिन्दी दैनिक 'प्रभात वार्ता' समेत दूसरे प्रकाशन और चैनल अचानक बंद कर दिए गए। चिटफंड कंपनियों पर जब सरकार का शिकंजा कसने लगा और समूह द्वारा प्रकाशित-प्रसारित अखबार तथा चैनल जब कंपनी का बचाव करने में असमर्थ रहे तो सारधा समूह ने अपने सभी अखबारों-चैनलों का प्रकाशन-प्रसारण बंद कर दिया। उस घटना ने एक बार फिर चिटफंड कंपनियों की आवारा पूँजी के साथ मीडिया की भूमिका को बहस के केंद्र में ला खड़ा किया था।

स्वातंत्र्योत्तर काल में साहित्यिक पत्रकारिता की दृष्टि से कोलकाता बहुत उर्वर भूमि रही। आजादी के पहले कोलकाता में जिस प्रकार 'मतवाला' और 'विशाल भारत' के कार्यालय

साहित्यकारों के बड़े केंद्र थे, आजादी के बाद 'ज्ञानोदय', 'मणिमय', 'वागर्थ' और 'जनसत्ता' उसके केंद्र बने। कोलकाता से प्रसिद्ध साहित्यिक मासिक 'ज्ञानोदय' निकलती थी। लक्ष्मीचंद जैन और जगदीश के संपादन में 'ज्ञानोदय' ने नवलेखन के विविध प्रयोगों और साहित्य की नई संचेतना को बड़ी उदारतापूर्वक प्रस्तुत किया।[26] भारतीय ज्ञानपीठ ने जनवरी 1949 में मासिक 'ज्ञानोदय' पत्रिका निकाली थी जो फरवरी 1970 तक निकलती रही। रमेश बक्षी ने जब 'ज्ञानोदय' का संपादन भार सँभाला तो आधुनिकता से संबंधित विचार-विमर्श से भरे निबंध लगातार प्रकाशित किए।

मोहन सिंह सेंगर ने कोलकाता से जुलाई 1948 में 'नया समाज' का प्रवेशांक निकाला, अस्सी पृष्ठों का। उसमें प्रकाशित पहली रचना मैथिलीशरण गुप्त की सोद्देश्य कविता 'एकलव्य' है। द्वितीय रचना हरिवंश राय बच्चन की दो शिक्षाप्रद कविताएँ - 'बापू के फूलों का जुलूस' और 'आत्मशक्ति का पुजारी' है। इसी अंक में जैनेंद्र कुमार का लेख 'सर्वोदय की नीति', अम्बिकाप्रसाद वाजपेयी का लेख 'क्या यही स्वराज्य है', हजारीप्रसाद द्विवेदी का निबंध 'नाखून क्यों बढ़ते हैं' छपा है। 'नया समाज' दस वर्षों तक निकलता रहा। उसे मैथिलीशरण गुप्त, राहुल सांकृत्यायन, रांगेय राघव, महादेवी वर्मा, बनारसीदास चतुर्वेदी, अज्ञेय समेत हिन्दी के सभी दिग्गजों का रचनात्मक सहयोग मिलता रहा। सितंबर 1948 के अंक में भगवत शरण उपाध्याय, वृंदावनलाल वर्मा, रांगेय राघव, हजारीप्रसाद द्विवेदी, काका कालेलकर की रचनाएँ छपी हैं, तो दिसंबर 1948 के अंक में रघुवीर सहाय, चंद्रकुँवर लाल की रचनाएँ छपी हैं। 'नया समाज' ने साहित्य के माध्यम से समाज को जाग्रत करने का प्रयास किया। निरंतर घाटे में निकलने के बाद 'नया समाज' जून 1958 से बंद हो गया।

कोलकाता से जगदीश ने 'इकाई', शरद देवड़ा ने 'अणिमा', पृथ्वीनाथ शास्त्री ने 'सुप्रभात', भोलानाथ बिंब ने विनोद, निर्भय मल्लिक ने 'विभक्ति' निकाली। 'गल्पभारती', 'संदर्भ', 'परिदृश्य', 'समवेत', 'समिधा', 'विध्वंस,' 'अप्रस्तुत', 'सनीचर', 'अर्थात', 'मुक्तांत्र', 'धूमकेतु', 'बोध' जैसी पत्रिकाओं के भी कुछ अंक निकले। 'रूपाम्बरा' के माध्यम से सन 1965 में युयुत्सावादी कविता की विचार यात्रा आरंभ होती है। कोलकाता से अनियतकालीन पत्रिका 'समकालीन सृजन' के दो दर्जन अंक प्रकाशित हो चुके हैं। इसके संपादक शंभुनाथ हैं। 'समकालीन सृजन' ने कई विशेषांक निकाले जिसमें पत्रकारिता, सिनेमा, आधुनिकता पर विशेषांक शामिल हैं। सन 1969 में कोलकाता से साहित्यिक पत्रिका 'मणिमय' निकली। उसके संपादक थे रामव्यास पांडेय। वे दैनिक 'लोकमान्य' में पत्रकारिता कर चुके थे। 'मणिमय' के कई विशेषांक निकले जो बाद में पुस्तकाकार भी प्रकाशित हुए। वे हैं - (1) अकविता : स्थितियाँ और अंतर्धाराएँ, (2) समकालीन आलोचना के प्रतिमान, (3) यशपाल : व्यक्तित्व और कृतित्व, (4) हिन्दी पत्रकारिता, (5) निराला की याद और (6) हिन्दी साहित्य : बंगीय भूमिका। सन 1994 में इस पत्रिका के पचीस वर्ष पूरे होने पर उसका विशेषांक निकला - एक पत्रिका की रजत भूमिका। सन 1995 में भारतीय भाषा परिषद ने मासिक 'वागर्थ' का प्रकाशन प्रारंभ किया। उसके संस्थापक संपादक थे - प्रभाकर श्रोत्रिय। उनके संपादन में कोलकाता हिन्दी साहित्य के केंद्र में आ गया था। सितंबर 2013 से साहित्य के केंद्र में मासिक 'लहक' पत्रिका है, जिसके संपादक हैं निर्भय देवयांश। 'लहक' के अब तक निकले सभी अंकों की बहुत चर्चा रही है। बंगाल में दुर्गापूजा के अवसर पर 'जनसत्ता', 'प्रभात खबर' तथा 'छपते-छपते' के जो पूजा विशेषांक निकलते हैं, उसमें देशभर के लेखक लिखते हैं। 'स्वाधीनता' का पूजा विशेषांक भी निकलता है। हिन्दी पाठकों

को अपने पसंदीदा लेखकों के उपन्यासों, कहानियों, कविताओं, नाटकों, संस्मरणों, यात्रा वृत्तांतों और निबंधों का संग्रह इन शारदीय विशेषांकों में इकट्ठा मिल जाता है।

इस बीच बंगाल में नंबर वन दैनिक अखबार बनने के बाद 'सन्मार्ग' ने पड़ोसी राज्यों की ओर रुख करना शुरू किया और सन 2002 में भुवनेश्वर से भी 'सन्मार्ग' छपने लगा। ओडिशा में वैसे हिन्दी पत्रकारिता की छिटपुट कोशिशें उसके पहले भी हुई थीं। अनसूया प्रसाद पाठक ओडिशा में हिन्दी पत्रकारिता के जनक माने जाते हैं। उन्होंने सन 1947 में मासिक 'राष्ट्रभाषा पत्र' निकाला था। परवर्ती काल में संबलपुर से दैनिक 'समाचार', मासिक 'चांदनी रात', 'सुब्रती', साप्ताहिक 'भुवनश्री', 'कटूक्ति' निकला। नवीनचंद्र शर्मा ने ब्रजवाणी, दुर्योधन पंडा ने साप्ताहिक 'नया रास्ता' और आदित्य कुशवाला ने साप्ताहिक 'बढ़ते चलें' निकाला। लेकिन ओडिशा में व्यवस्थित ढंग की हिन्दी पत्रकारिता पिछले पंद्रह वर्षों से 'सन्मार्ग' के भुवनेश्वर संस्करण में ही देखी जा सकती है।

पूर्वोत्तर की ओर देखें तो असम से 837 अखबार, मणिपुर से 258, त्रिपुरा से 162, सिक्किम से 115, मेघालय से 110, नगालैंड और अरुणाचल से 25-25 अखबार निकलते हैं। इनमें हिन्दी के भी कुछ अखबार शामिल हैं। गुवाहाटी से सन 1989 से ही हिन्दी दैनिक 'पूर्वांचल प्रहरी' और हिन्दी दैनिक 'सेंटिनल' निकल रहा है। 'पूर्वांचल प्रहरी' अब गुवाहाटी के अलावा जोरहट तथा उत्तर लखीमपुर से भी छपता है। हिन्दी दैनिक 'पूर्वोदय' सन 2005 से गुवाहाटी और जोरहट से निकल रहा है। इधर वह सिलचर से भी निकलने लगा है। गुवाहाटी से हिन्दी दैनिक 'उत्तरकाल' और 'प्रातः खबर' भी निकलते हैं। गुवाहाटी के ये दैनिक तथा सिक्किम से प्रकाशित हिन्दी दैनिक 'अनुगामिनी', अरुणाचल से हिन्दी साप्ताहिक 'अरुण आवाज' पूर्वोत्तर के साहित्य को यदा-कदा हिन्दी में अनूदित कर लाते रहे हैं। किंतु सुचिंतित तरीके से हिन्दी और पूर्वोत्तर में भाषा सेतु बंधन का काम पूर्वोत्तर की जिन पत्रिकाओं ने पिछले दो-तीन दशकों के दौरान किया, वे हैं - 'उलुपी', 'महिप' और 'समन्वय पूर्वोत्तर'।

रविशंकर रवि के संपादन में निकलनेवाली 'उलुपी' पत्रिका ने पूर्वोत्तर खासकर असमिया के बहुमूल्य साहित्य का हिन्दी में अनुवाद प्रकाशित किया है। पूर्वोत्तर के साहित्य और संस्कृति को हिन्दी पाठकों तक पहुँचाने के लिए रविशंकर रवि ने गुवाहाटी से 1997 में इस पत्रिका का अपने दम पर संपादन-प्रकाशन प्रारंभ किया था। चूँकि यह पत्रिका पूर्वोत्तर से जुड़ी है इसलिए इसका नाम भी पूर्वोत्तर की महाभारतकालीन नगा युवती उलुपी के नाम पर रखा गया। उलुपी ने क्षेत्रीय स्वायत्तता के सवाल पर अपने पति को युद्ध के लिए ललकारा था। 'उलुपी' के माध्यम से रवि शंकर रवि असमिया की शताधिक कहानियाँ अब तक हिन्दी में ला चुके हैं। इस पत्रिका के जिन विशेषांकों को आज भी याद किया जाता है, वे हैं - असमिया कहानी विशेषांक, अवनी चक्रवर्ती पर केंद्रित अंक, ज्योति अंक, असमिया साहित्य सभा विशेषांक, शीलभद्र विशेषांक, पूर्वोत्तर में हिन्दी विशेषांक। 'उलुपी' के जरिए हिन्दी के एक लाख से अधिक पाठकों तक रवि ने पूर्वोत्तर के साहित्य को पहुँचाया है। इस पत्रिका के पिछले अंक में तीन दिवंगत विभूतियों को श्रद्धांजलि अर्पित की गई है। ये विभूतियाँ हैं - संग्रीत सम्राट भूपेन हजारिका, असमिया की शीर्ष लेखिका मामोनी रायशम गोस्वामी और राष्ट्रीय-अंतरराष्ट्रीय फलक पर असमिया कला को नई पहचान देने वाले कलाकार शोभा ब्रह्म। इस संयुक्त विशेषांक में ऐसे आलेख हैं जिन्हें पढ़कर हिन्दी के पाठक भी तीनों विभूतियों को जान-समझ सकते हैं। पूर्वोत्तर के साहित्य और वहाँ की संस्कृति को हिन्दी में लाने के समानांतर रवि 'उलुपी' में पूर्वोत्तर के हालात पर लेख भी छापते रहे हैं ताकि राष्ट्रीय मीडिया में

पूर्वोत्तर के बारे में किए जा रहे एकपक्षीय प्रचार को काटा जा सके। 'उलुपी' के पाँचवें अंक में रवि ने लिखा है, ''पूर्वोत्तर में उग्रवाद का इतिहास आधी सदी से भी अधिक पुराना है। आजादी के समय से ही नगालैंड और मणिपुर उग्रवाद की आग में सुलगने लगे थे। मणिपुर में सन 1945 में पीपुल्स लिबरेशन आर्मी का गठन हो गया, तो नगा नेता फिजो स्वाधीन नगालैंड की जिद करने लगे। नगालैंड और मणिपुर की आग बुझी भी न थी कि सन 1966 में मिजो नेशनल फ्रंट का गठन करके लालडेंगा ने स्वतंत्र मिजोरम के लिए बगावत कर दी। उधर बांग्लादेश से आए बंगाली शरणार्थियों की वजह से अपनी ही भूमि में अल्पसंख्यक हो गए त्रिपुरा के आदिवासियों ने अपने अस्तित्व की रक्षा के लिए बंदूक उठाकर जंगल का रास्ता पकड़ा। अब उसी रास्ते पर बोडो समुदाय भी चल पड़ा है। उग्रवाद और बंदूक की विफलता को सबसे पहले लालडेंगा ने महसूस किया और सन 1986 में हथियार डाल दिया। त्रिपुरा के त्रिपुरा वालिंटियर फोर्स ने भी 1988 में समर्पण कर दिया, लेकिन दूसरे कतिपय गुट अभी भी सक्रिय हैं। पूर्वोत्तर में उग्रवाद का विस्तार महज दिल्ली की उपेक्षा से नहीं हुआ है, राज्य में सत्ता प्राप्त करने और उग्रवादी संगठनों के बीच ताकतवर बनने की प्रवृत्ति भी इसके लिए जिम्मेदार है। मणिपुर में कुकी नेशनल आर्मी का गठन एन.एस.सी.एन. के हमले का जवाब देने के लिए किया गया। बोडो उग्रवादियों का मुकाबला करने के लिए असम के संथालों ने बिरसा कमांडो फोर्स और कोबरा लिबरेशन टाइगर्स का गठन कर लिया। मणिपुर में कूकी नेशनल आर्मी तथा एन.एस.सी.एन. के बीच और असम में एन.डी.एफ.बी. तथा बी.एल.टी. के बीच हुए खूनी संघर्ष में अब तक सैकड़ों निरीह लोग मारे जा चुके हैं।''[27] 'उलुपी' के पाँचवें अंक में ही रवि ने लिखा है, ''प्रकृति से प्रेम, सहज जिन्दगी, उन्मुक्त प्रेम और अतिथि सत्कार पूर्वोत्तर के लोगों की विशेषता रही है। लेकिन सवाल यह उठता है कि इस तरह के असंतोष का स्थायी समाधान क्या है। हत्याओं का आम जनता समर्थन नहीं करती। इसलिए सामाजिक बदलाव में विश्वास करने वाले उग्रवादियों को जंगलों में भटकने की बजाय आम जनता के बीच जाकर अपने मकसद को रखना चाहिए।''[28]

'उलुपी' के बाद जिस हिन्दी पत्रिका का उल्लेख जरूरी है, वह 'महिप' है। सन 1985 में मासिक 'मणिपुर हिन्दी परिषद पत्रिका' निकली। पत्रिका के मणिपुर भाषा माँग विशेषांक तथा हिन्दी और मणिपुरी साहित्यकारों पर केंद्रित अंकों की खासी चर्चा रही। मणिपुरी के लमाबम कमल, नीलवीर शास्त्री, चाबोआ पर केंद्रित अंक बहुत प्रभावशाली निकले। हिजम अंडाहल पर जो विशेषांक निकला, उससे पहली बार मणिपुरी के उस महान साहित्यकार के योगदान से हिन्दीभाषी अवगत हुए। सन 1991 में यह पत्रिका 'महिप पत्रिका' नाम से त्रैमासिक हो गई। 'महिप' (मणिपुर हिन्दी परिषद का संक्षिप्त नाम) ने मणिपुरी उपन्यासों, मणिपुरी लोककला मणिपुरी लोकनाट्य, पर आलोचनात्मक लेख प्रकाशित किए तो मणिपुरी कविताएँ भी। महिप के दिसंबर 1993 के अंक में बैक कवर मणिपुर की चार अन्य पत्रिकाओं की जानकारी दी गई है। वे पत्रिकाएँ हैं - 'युमशकैश', 'कुन्दो परेड', 'प्रयास' और 'नील कमल'। आरंभिक वर्षों में जिस कुशलता से 'महिप' का संपादन आचार्य राधा गोविंद थोड़ाम ने किया, परवर्ती काल में इबोहल सिंह काॅजम भी उसी कुशलता से उसका संपादन करते रहे। इबोहल सिंह काॅजम नब्बे के दशक से ही 'महिप' का संपादन कर रहे हैं। 'महिप' के जून 2011 के अंक में हिन्दी तथा मणिपुरी संरचनाओं का व्यतिरेकी अध्ययन शीर्षक डा. टी. कुंजकिशोर सिंह का बहुत महत्वपूर्ण लेख छपा है। 'महिप' के दिसंबर 2014 के अंक में प्रकाशित रघु लैसांड़थेम की तीन कविताओं से समकालीन मणिपुरी कविता का मिजाज समझा जा सकता है। कविताओं का

ग्राम शीर्षक कविता में कवि कहता है : यह आकाश/गूँज भरा है/पक्षियों की चहचहाहट से/कोई भी न करना युद्ध/नहीं है युद्धस्थल/बगिया है यह धरती।[29] इन पंक्तियों में पूर्वोत्तर का स्वर्ग मानी जाने वाली धरती को रक्तरंजित करने की गहरी टीस अभिव्यक्त हुई है। पूर्वोत्तर भारत से प्रकाशित होने वाली हिन्दी पत्रिकाओं - 'अरुण प्रभा', 'मेघालय दर्पण' और 'असम प्रदीप' ने भी हिन्दी तथा पूर्वोत्तर की भाषाओं के बीच सेतुबंधन का उल्लेखनीय कार्य किया है। इस दिशा में सबसे व्यवस्थित, ठोस और स्थायी महत्व का काम किया केंद्रीय हिन्दी संस्थान द्वारा प्रकाशित 'समन्वय पूर्वोत्तर' ने। 'समन्वय पूर्वोत्तर' ने पूर्वोत्तर के सभी प्रदेशों के आधुनिक और समकालीन साहित्य, यहाँ तक कि लोक साहित्य से हिन्दी समाज को परिचित कराया। पत्रिका के आरंभिक अंकों में ही असमिया लिपि के उद्भव और विकास, असमिया गीत साहित्य, बर गीत, खासी साहित्य, निशि साहित्य, नगा साहित्य, बोडो साहित्य, मणिपुरी कथा साहित्य, नेपाली साहित्य, लेप्चा संस्कृति, अरुणाचल के लोक नृत्य का ठोस परिचय दिया गया है। यह भी तथ्य है कि उत्तर के पहले प्रश्न होता है और उत्तर पूर्व भारत, शेष भारत के लिए आज भी प्रश्न बना हुआ है। वह क्यों प्रश्न बना हुआ है, इसे पूर्वोत्तर भारत की पत्रकारिता लगातार उठाती रही है। तथ्य है कि पूर्वोत्तर भारत का हिस्सा होकर भी कई बार भारत का हिस्सा नहीं लगता। पूर्वोत्तर के लोगों की कद-काठी, शक्ल-सूरत, उनकी संस्कृति, उनकी सामाजिक परंपराएँ, रीति-रिवाज और उनकी भाषाएँ शेष भारत से भिन्न हैं। भिन्न चेहरे-मोहरे के कारण पूर्वोत्तर के लोगों से अपने ही देश में वीसा दिखाने को कहा जाता है। इन्हीं सबके कारण पूर्वोत्तर के लोग भारत की विविधता, विशालता और बहुलता से सामंजस्य नहीं बिठा पाते। सामंजस्य नहीं बिठाने से ही पूर्वोत्तर से भारत की संप्रभुता को चुनौती भी मिलती रही है।

संदर्भ

1. अग्रवाल, मूलचंद (1944) पत्रकार की आत्मकथा, विश्वमित्र प्रेस, कोलकाता, पृष्ठ-39
2. वही, पृष्ठ-43
3. वही, पृष्ठ-43
4. वही, पृष्ठ-47
5. वही, पृष्ठ-48
6. वही, पृष्ठ-48
7. शर्मा, श्रीनिवास (संपादक), 1999, राष्ट्रीय मुक्ति संघर्ष और हिन्दी पत्रकारिता, छपते-छपते प्रकाशन, कोलकाता, पृष्ठ-72
8. गुप्त, रामअवतार (2009), कर्म मार्ग धर्म मार्ग सन्मार्ग एक आत्मकथा, सन्मार्ग प्राइवेट लिमिटेड, कोलकाता, पृष्ठ-57
9. वही, पृष्ठ-57
10. मिश्र, कृष्णबिहारी (2014 द्वितीय संस्करण), हिन्दी साहित्यः बंगीय भूमिका, भारतीय विद्या मंदिर, कोलकाता, पृष्ठ-79
11. निराला (संपादक, 2016) सफरनामा एक अखबार का 25 वर्षों का, प्रकाशन संस्थान, नई दिल्ली, पृष्ठ-411
12. वही, पृष्ठ- 181
13. वही
14. वही
15. वही
16. वही
17. वही, पृष्ठ-183
18. वही, पृष्ठ-476
19. वही, पृष्ठ-318
20. वही, पृष्ठ-320
21. वही, पृष्ठ-399
22. वही, पृष्ठ-315
23. वही, पृष्ठ-392
24. वही, पृष्ठ-389
25. वही, पृष्ठ-180
26. मिश्र, कृष्णबिहारी (2014 द्वितीय संस्करण), हिन्दी साहित्यः बंगीय भूमिका, भारतीय विद्या मंदिर, कोलकाता, पृष्ठ-79
27. 'उलुपी', अंक-5, अक्टूबर-दिसंबर 1999, पृष्ठ-5
28. वही, पृष्ठ-6
29. महिप, दिसंबर 2014, पृष्ठ-24

(Email - drkschaubey@gmail.com)

विश्लेषण

पश्चिम-भारत की हिन्दी पत्रकारिता

■ प्रकाश दुबे

मुंबई का एक समाचार पत्र छपी हुई सामग्री के ऊपर शीर्षक देता था - इस समाचार का आप इस्तेमाल कर सकते हैं। आपको नितांत अंतरंग बातें करने किसी साथी की आवश्यकता है?उसके साथ समय बिताएँ। देशी चाहिए या विदेशी?रूसी, चीनी, नेपाली से लेकर मलयाली, बंगाली तक उपलब्ध। हिंदी न जानने वालों के लिए अँगरेजी में संवाद करने वाली महिलाएँ उपलब्ध हैं। शिकायत के बाद न्यूज यू कैन यूज बंद हुआ या नहीं?हमसे मत पूछिए। पढ़े लिखे को फारसी क्या?अँगरेजी क्या?खुद ही पढ़ लेना। एक मराठी समाचार पत्र ने रविवार के दिन समाचार पत्र के साथ कंडोम का पैकेट उपहार में पाठकों को भेज दिया। पाठकों तथा महिला संगठनों के घोर विरोध के बाद मराठी समाचार पत्र ने कान पकड़ लिए। कसम खाई - आगे से ऐसी भूल नहीं करेंगे। ये दोनों कारनामे हिंदी पत्रकारिता के नहीं हैं।

हिंदी का जिक्र छिड़ेगा तो महात्मा गांधी याद आएँगे। गांधी जी यरवडा जेल में थे। उन्होंने ठान लिया और 'हरिजन' अँगरेजी में, 'हरिजन बंधु' गुजराती तथा 'हरिजन सेवक' हिंदी में निकले। पहला हिंदी 'हरिजन सेवक' 22 फरवरी 1922 को निकला, जिसके संपादक वियोगी हरि थे। छपने का पता किंग्सवे दिल्ली रहता था। लेखक साबरमती आश्रम, मुंबई या फिर उन जेलों में थे, जहाँ फिरंगी कैद कर रखते थे। हरिजन सेवक के अंक का पहला पन्ना माधवराव सप्रे संग्रहालय या गांधी स्मृति में देखने मिले तो अवश्य देखें। महादेव भाई देसाई ने किन्हीं श्रीमती सेंगर के प्रश्न पर स्पष्टीकरण दिया। विषय था - समागम और गर्भाधान से बचाव। लेख में स्पष्ट किया गया था कि गांधी का जो साक्षात्कार छपा है उसमें गांधी जी ने ऋतुकाल में समागम का समर्थन नहीं किया। इसे अपेक्षाकृत छोटी बुराई बताया। गांधी के ब्रह्मचर्य का अर्थ तथा संतति-निग्रह जैसे विषय पर शालीनता के साथ चर्चा की गई। तीन कालखंड। तीन उदाहरण। मुंबई में आरंभिक काल में अँगरेजी और मराठी, गुजराती की तुलना में हिंदी पत्रकारिता पीछे रही। गांधी जी ने नागपुर के निकट सेवाग्राम को अपना केन्द्र बनाया। इसलिए पश्चिम भारत में गांधीवादी पत्रकारिता और पत्रकार पिछले पचास वर्ष से सक्रिय हैं।

इसका पहला उदाहरण है - नवभारत टाइम्स। नवभारत टाइम्स के मुंबई संस्करण का प्रकाशन पश्चिम भारत के हिंदी जगत के लिए बड़ी घटना थी। देश स्वतंत्र हो चुका था। 29 जून 1950 को पहला अंक प्रकाशित हुआ। सिओल पर कम्युनिस्टों के कब्जे की पहली खबर थी। माथे के नीचे दाहिने तरफ चित्र छपा था। चित्र में व्यक्ति के घुटनों का निचला हिस्सा दिखता था। परिचय का एक शब्द-सत्य। बच्चा अनुगमन कर रहा है। दिशा-निर्देशक व्यक्ति यानी सत्य को जन-सेवा के मार्ग पर जाता दिखा रहा था। बच्चा समाचार पत्र है। यह अनुमान लगाने में कठिनाई नहीं होती। मार्गदर्शक महात्मा गांधी हैं। साहू जैन परिवार के पास समाचार पत्र का स्वामित्व तब तक नहीं आया था। अशोक कुमार जैन के संभवतः ससुराल पक्ष से रामकृष्ण डालमिया स्वामी थे।

प्रवेशांक में पहले पृष्ठ पर आम तौर पर संपादक की टिप्पणी छपती है। वह नहीं थी। समाचार पत्र की भूमिका स्पष्ट करने श्री रामकृष्ण डालमिया का संदेश प्रकाशित किया गया था। पहला वाक्य था - नवभारत टाइम्स और मेरे द्वारा संचालित दैनिक और साप्ताहिक पत्रों से दुखियों को सुखी और शरणार्थियों को पुरुषार्थी बनाने, बेरोजगार को नौकरी और भूखे को रोटी दिलाने, विरोधियों को मित्र बनाने, कायर को वीरता सिखाने..... अब यह वाक्य इतना लम्बा था कि बाकी उद्देश्यों का बखान करना छोड़कर पहले पैराग्राफ के अंत में डालमिया जी के सपने की तरफ जुड़ें। कांग्रेस के बढ़ते भ्रष्टाचार, घूसखोरी और चोर बाजार को बंद कराने तथा कांग्रेस नेताओं को मनमानी न करने का कर्तव्य दिखाने आदि मेरे मन-उपवन के इन आचार फूलों की पवित्र-माला पिरोने में यदि सफल हुआ तब तो समाचार पत्रों के उद्योग को धन्य समझूँगा अन्यथा देश का पैसा बाहर भेजकर विदेशों से कागज आदि मँगाने में निंदा स्तुति भरे समाचार पत्रों से व्यर्थ पाठकों का समय गँवाने का कारण बनता हुआ धर्म और देश के प्रति पत्र-संचालक का कर्तव्य पालन करने से दूर रहूँगा। इसके बाद के दो पैराग्राफ में कुछ अन्य संकल्प अथवा उद्देश्य बताए गए थे। डालमिया जी के चित्र के साथ पूरा संदेश चौथे कालम में प्रकाशित हुआ था। मुझे इस समय ध्यान नहीं आ रहा है कि मुंबई संस्करण के पहले संपादक कौन थे?पचास के दशक में 'नवभारत टाइम्स' दिल्ली के साथ ही कोलकाता से प्रकाशित होता था। 66 वर्ष बीत गए। नभाटा के पुराने और वर्तमान पत्रकार विचार करते होंगे कि कितने कदम किस दिशा में बढ़ाए?समय के साथ लक्ष्य बदलता चला गया। इसलिए आदर्श बदले। अंतरराष्ट्रीय बदलाव का प्रभाव पड़ा।

उस युग में धारणा यही थी कि हर साहित्यकार पत्रकार है। कुछ इस तरह, जिस तरह प्राण हैं तो साँस चलती ही होगी। पत्रकार भी साहित्य की किसी न किसी विधा में पैठ बनाए हुए थे। पत्रिकाओं का संपादन साहित्यकार के हाथों में सौंपा जाता था। पत्रकारिता को अलग विधा के रूप में पहचान मिलने में समय लगा। टाइम्स समूह ने लम्बे समय तक साहित्य और सिनेमा पर ध्यान दिया। धर्मयुग, माधुरी, सारिका जैसी पत्रिकाओं ने हिंदी को समृद्ध किया। पाठक वर्ग बढ़ाया। रचनात्मक ऊर्जा प्रदान की। मान्य साहित्यकार धर्मवीर भारती 1960 में धर्मयुग के संपादक बने। निखारा। बांग्लादेश के मुक्ति युद्ध का हाल जानने स्वयं गए। साहित्य पर पत्रकारिता हावी होती गई। समूह में कमलेश्वर, गणेश मंत्री, विश्वनाथ सचदेव, अवध नारायण मुद्गल, अरविंद कुमार, विनोद तिवारी जैसे संपादक तथा अनेक जोशीले पत्रकार रहे। उस दौर में लगता था कि साहित्यधानी इलाहाबाद से मुंबई जा कर बस रही है। धीरे धीरे राजनीति विचार के बजाय व्यक्ति केन्द्रित होने लगी। समाचार और विचारों पर व्यक्तियों के आभा चक्र का आक्रमण हुआ। डा. भारती स्वयं समाजवादी विचार तथा डा. राम मनोहर लोहिया और जय प्रकाश नारायण के व्यक्तित्व से प्रभावित थे। धर्मयुग जैसी पत्रिका में मुखपृष्ठ पर इंदिरा गांधी का अवतार एकबारगी तर्कसंगत माना जा सकता है, परंतु उस दौर में मुखपृष्ठ पर जगह मिलना अमिताभ बच्चन के लिए च्यवनप्राश का डोज ही था। आज हम यह कह कर तसल्ली दे लें कि उगते सूरज को पहले पहचान लिया। विकेन्द्रीकरण बढ़ा। साक्षरता बढ़ी। इसके बावजूद पश्चिम भारत में हिंदी पत्रकारिता अँगरेजी या भाषाई अखबार की पिछलग्गू बनी रही। जबकि गुजराती और मराठी के साथ ऐसा नहीं हुआ। आज भी गुजरात में अँगरेजी अखबार चौथे क्रम तक नहीं पहुँचे। धर्मयुग और माधुरी अपवाद रहे। 1980 के दशक तक टाइम्स की विधान सभा खबरों के अनुवाद से नवभारत टाइम्स का काम चल जाता था। राजस्थान के व्यापारी वर्ग में मालिकों और

पत्रकारों की पहचान थी। पैठ थी। 1984 में नियुक्ति के बाद पहली बार किसी पत्रकार रिपोर्टर के लिए नभाटा मुंबई ने टाइपराइटर खरीदा। आज संस्थान पूर्णतः कंप्यूटरमय है। सुरेन्द्र प्रताप सिंह ने नवभारत टाइम्स में आते ही साहसी पत्रकारिता को प्रेरित किया। समाचार पत्र स्वामी के प्रिय धीरू भाई अम्बानी और मुरली देवड़ा के बारे में खोजी खबर छपने की कल्पना नहीं की जा सकती थी। राजेन्द्र माथुर के कल्पनाशील नेतृत्व में महाराष्ट्र के नागरिक समझ सके कि भाषाई पत्रकारिता के साथ कदम मिलाकर हिंदी पत्रकारिता नए प्रयोग कर सकती है। राजेन्द्र माथुर की पहल के कारण अनेक मराठीभाषी हिंदी पत्रकारिता में आए। माथुर-प्रभाव से नामी संपादक अछूते नहीं रहे। हिंदी पत्रकारिता को राजस्थानी कारोबारी घरानों की परिक्रमा समझने वाले महाराष्ट्र टाइम्स के संपादक गोविंद तलवलकर ने माखनलाल चतुर्वेदी पत्रकारिता विश्वविद्यालय की नीति तय करने वाली समिति से जुड़ने पर सहमति दी। राजेन्द्र माथुर के वश की बात थी कि मुंबई में बैठे शरद जोशी से प्रतिदिन नाम से प्रतिदिन कालम लिखवाएँ और वह देश के सभी संस्करणों में छपकर जबर्दस्त लोकप्रिय हो। इतना कि, अनेक पाठक प्रतिदिन से नवभारत टाइम्स पढ़ना आरम्भ करें। लोग खिल्ली उड़ाते कहते थे - नवभारत टाइम्स का संसार मुंबई से उल्हासनगर तक है। अखबार सार्वदेशिक रूप पा सका।

नवभारत टाइम्स के साथ लगभग 15 वर्ष का साथ रहा। इस दौरान सभी संचालक-स्वामी छपास की भूख से मुक्त रहे। प्रबंधन की यह प्रवृत्ति अविस्मरणीय रही। विदेश में उपचार के बावजूद बैनेट कोलमैन कंपनी के उपाध्यक्ष समीर जैन के किशोर पुत्र का देहान्त हुआ। नवभारत टाइम्स सहित किसी संस्करण में समाचार नहीं छपा। समाचार पत्र के सूचना फलक पर कुछ इस तरह था - जो आता है, जाता है। न जन्म से प्रसन्नता, न गमन में शोक। चि. अमुक अमुक ने देह त्याग

“ समाचार पत्र संसार की एक बड़ी ताकत है तो उसके सिर जोखिम भी कम नहीं। पर्वत की जो शिखरें हिम से चमकती और राष्ट्रीय रक्षा की महान दीवार बनती हैं, उन्हें ऊँची होना पड़ता है। जगत में समाचार पत्र यदि बड़प्पन पाए हुए हैं तो उनकी जिम्मेवारी भी भारी है। बिना जिम्मेवारी के बड़प्पन का मूल्य ही क्या है और वह बड़प्पन तो मिट्टी के मोल का हो जाता है जो अपनी जिम्मेवारी को नहीं सँभाल सकता।

- माखनलाल चतुर्वेदी ”

किया। जैन धर्म की सीख संदेश के हर शब्द में प्रतिबिंबित थी। मुझे किसी ने बताया कि धर्म की मान्यता ध्यान में रखकर ही समाचार प्रकाशित नहीं किया गया। मात्र सूचना दी गई। कल्पना कर सकता है कोई कि छह दशक बाद उसी समाचार पत्र में पर्यूषण पर्व पर क्षमापना के संदेश छपने लगे। सशुल्क यानी विज्ञापन। यह हुआ बदलाव। महावीर अधिकारी से लेकर राम मनोहर त्रिपाठी, सुरेन्द्र प्रताप सिंह, शचीन्द्र त्रिपाठी और अब सुंदरचंद ठाकुर जैसे संपादक इस बदलाव के साक्षी रहे।

हिंदी पत्रकारिता का नया दौर लाने का एक प्रयास नरीमन पाइंट के एक्सप्रेस टावर से हुआ। रामनाथ गोयनका ने दिल्ली से प्रकाशित जनसत्ता को मुंबई से भी प्रकाशित किया। खबरों में ताजगी थी किंतु संतुलन गड़बड़ा जाता था। टाइम्स समूह की अखबार वितरण व्यवस्था ने भी जनसत्ता की कमर तोड़ी। वैसे भी टाइम्स और एक्सप्रेस समूह में बैठे कर्णधार हिंदी - हिमायती नहीं थे। प्रभाष

जोशी के साथ गोयनका जी की जोड़ी बनी जयप्रकाश आंदोलन के दौरान साप्ताहिक 'प्रजानीति' से, जो बाद में 'आसपास' बना और बंद हुआ। अँगरेजी पत्रकारिता से आए राहुल देव ने मुंबई में 'जनसत्ता' की कमान सँभाली। नया रूप दिया। राहुल देव ने शिवसेना की दबंगई का विरोध किया। वह काल था जब बाल ठाकरे जोश से लबरेज थे और उनके कार्यकर्ता मणिमाला जैसी महिला पत्रकार पर हाथ उठाने से गुरेज नहीं करते थे। मणिमाला 'नवभारत टाइम्स' में कार्यरत थीं। जनसत्ता मुंबई के संपादक राहुल देव विरोध करते हुए सड़क पर उतरे। जनसत्ता कुछ बरस पहले बंद हो गया।

गोयनका जी ने इससे पहले शरद जोशी को कमान देकर 'हिंदी एक्सप्रेस' साप्ताहिक शुरू किया था। जोशी ने धर्मयुग की लीक से हटकर प्रयोग किए। उन्होंने ट्रक के पीछे लिखी इबारतों पर आकर्षक आवरण कथा तैयार की। एक दिन मैं बैठा था। किसी नामी साहित्यकार ने पूछा - आप कब तक नए प्रयोग कर पाएँगे? अनेक, जोशी ने कहा - कल डायरियों पर, कैलेंडरों पर। गोयनका जी का आरम्भिक लगाव इतना कि जोशी जी के लिए रहने की व्यवस्था करने आतुर। एक दिन कहा - आप की पत्नी से बात करता हूँ। आप उन्हें लाना नहीं चाहते। अब पत्रिका जम गई है। उन्हें बुला लें। इस मिठभाषी संवाद के महीने भर बाद अचानक पत्रिका बंद करने का निर्णय किया। संपादक को खबर तक नहीं दी। इस तरह दो प्रयोग असमय समाप्त हुए।

मुंबई में गुजराती पत्रकारिता से जुड़े अनेक लोगों ने हिंदी में प्रयोग किए। गुजराती तथा मराठी में 'वर्षा' पत्रिका निकालने वाले समूह ने हिंदी में 'श्रीवर्षा' आरंभ की। धर्मयुग में काम कर चुके सतीश बहादुर वर्मा ने नए विषय लेकर कड़ी मेहनत से श्रीवर्षा का विस्तार किया। हिंदी पत्रकारिता का दुर्भाग्य था कि सतीश जी गोवा से लौटते समय दुर्घटना के शिकार हो गए। इस तरह साहित्य और पत्रकारिता के समरस अनुपान का प्रयोग असमय बिखर गया।

ब्लिट्ज का उल्लेख किए बगैर हिंदी पत्रकारिता के तुर्रमखाँ तेवर की बात पूरी नहीं हो सकती। रूसी करंजिया के व्यक्तित्व की तरह अखबार का अपना तेवर था। करंजिया का निशाना तय रहता था। ब्लिट्ज की खबरों के साथ ही आखिरी पन्ना लोकप्रिय रहा। ख्वाजा अहमद अब्बास और बाद में राम मनोहर त्रिपाठी ने आखिरी पन्ना में आम लोगों की बात को आम-फहम भाषा में लिखा। नंद किशोर नौटियाल वरिष्ठतम संपादकों में हैं, जो अब तक सक्रिय हैं। हिंदी ब्लिट्ज बंद होने के बाद नौटियाल जी ने अपनी पत्रिका आरंभ की।

महाराष्ट्र ने महादेव भाई देसाई, काका कालेलकर, शंकर राव देव जैसे हिंदी सेवी लेखक-पत्रकार दिए, वहीं गणेश मंत्री - विश्वनाथ सचदेव की जोड़ी ने मृणाल गोरे के सहयोग से मराठी के केशव मेश्राम, दया पवार सहित कई सितारों को हिंदी जगत में पहचान दी। दलित लेखन का हिंदी से नाता बना।

हिंदी को प्रचारित करने में संवाद समितियों ने महत्वपूर्ण भूमिका अदा की। समाचार भारती और हिंदुस्तान समाचार दोनों के बहुभाषी बनने की संभावना थी। मुंबई, महाराष्ट्र और कुछ हद तक गुजरात में यह काम हुआ। हालाँकि ये संवाद समितियाँ गोदावरी पार कर कृष्णा और कावेरी को हिंदी क्षेत्र से नहीं जोड़ सकीं। यशवंत मुल्ये, जगन फडणवीस, पागे जी, प्रमोद मुजुमदार सहित दर्जनों मराठी भाषी पत्रकारों ने समाचार भारती, हिंदुस्तान समाचार, पीटीआई भाषा और वार्ता के माध्यम से भारतीय भाषाओं की पत्रकारिता में कलम से आहुति दी।

नारायण दत्त के रूप में भाषा और भाव को तराशने वाला कारीगर मिला। नारायण दत्त यानी भाई साहब का योगदान 'नवनीत' तथा प्रेस ट्रस्ट आफ इंडिया की फीचर सेवा में निखरा। भाषा के

सजीव, सार्थक और सही प्रयोग का काल था वह। देश के अनेक पत्रकार स्वीकार करेंगे कि उनकी भाषा तराशने में नारायण दत्त जी का योगदान रहा। भाई साहब की मातृभाषा कन्नड थी।

कारोबार से संबंधित 'व्यापार' जन्मभूमि ट्रस्ट ने गुजराती में आरम्भ किया। बाद में 'व्यापार' हिंदी में छपा। तब समझ में आया कि हिंदी कारोबार की भाषा बन सकती है। हिंदी का महत्व स्वीकार शिवसेना ने इस तरह किया कि मराठी 'सामना' का हिंदी संस्करण बाल ठाकरे ने आरंभ कराया। 'सामना' छपते 22 दिसम्बर 2016 को 20 वर्ष 300 दिन हुए। 'दोपहर का सामना' आज भी लिखता है - सभी के लिए सब कुछ। दिलचस्प संयोग यह है कि हिंदी 'सामना' के संपादक अन्य राजनीतिक दलों की शरण में चले गए। संजय निरुपम कांग्रेस, प्रेम भाजपा में। इन दिनों अनेक अखबार निकलते हैं। उनके साथ राजनीतिक, आर्थिक लाभ जुड़े हैं। 'हमारा महानगर' निखिल वागले जैसे जुझारू लोगों के सहयोग से बढ़ा। सन 2005 में बांबे इंटेलिजेंस सिक्योरिटी एजेंसी यानी बी.आई.एस. नाम की सुरक्षा गार्ड एजेंसी के आर. एन. सिंह ने ले लिया। इसका उन्हें राजनीतिक लाभ मिला। अपने लोगों और अपनी भूमि की खबरों की चाहत में 'यशोभूमि' नाम का अखबार पनपा।

मुंबई की हिंदी पत्रकारिता ने साहित्य और पत्रकारिता की कई जोड़ियाँ दीं। यह अलग किस्म की उपलब्धि है। रवीन्द्र कालिया और ममता कालिया, सतीश बहादुर वर्मा और सुदर्शना द्विवेदी। कुमुद संघवी और दिलीप चावरे। कहाँ तक गिनाएँ?मध्य और पश्चिम भारत के बीच प्रवेश-द्वार नागपुर और विदर्भ बड़ा केन्द्र रहा। बरार के नाम से प्रसिद्ध महाराष्ट्र का हिस्सा कभी सीपीएंड बरार था। भाषा का विवाद नहीं रहा। आज भी अनेक जिलों में हिंदी-मराठी द्विभाषी अखबार निकलते हैं। नागपुर से नवभारत, युगधर्म, बाद में कई अखबार निकले। रामगोपाल माहेश्वरी ने 'नवभारत' आरम्भ किया। वह कांग्रेस के प्रति रुझान के बावजूद तटस्थ रहा। 'युगधर्म' का संचालन राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ के हाथ में रहा। बाला साहब देवरस बरसों अध्यक्ष रहे। इसके बावजूद सत्यपाल पटाईत, मनोहर अंधारे आदि ने समझौता नहीं किया। अंधारे ने सहकारिता के आधार पर युगधर्म चलाने का जोखिम उठाया, क्योंकि संघ उसे बंद करना चाहता था। हालाँकि उनका प्रयास परवान नहीं चढ़ा। भारतीय जनता पार्टी के सत्ता में आने के बावजूद राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ के मुख्यालय में उनका समाचार पत्र नहीं है। वैसे भी राजनीतिक दल या विचार के अखबार पनप नहीं पाते। निष्पक्षता की बात करने वाले पनपने नहीं दिए जाते। साने गुरुजी ने पुणे से 'साधना' नाम की पत्रिका निकाली। आपातकाल में एस.एम. जोशी ट्रस्टी थे। आपातकाल में साधना को बंद करने के लिए सरकार ने कई षड्यंत्र किए। सफल नहीं हुए। साहसी संपादकों ने साधना का हिंदी संस्करण आरंभ किया।

महाराष्ट्र में हिंदी के अखबार और पत्रिकाओं की संख्या निरंतर बढ़ रही है। पाठक बढ़ रहे हैं। विज्ञापन मिलते हैं। तकनीक में भारी सुधार आया है। गुणवत्ता और विश्वसनीयता में धीमी गति से परिवर्तन आया। आत्मविश्वास में कमी तथा कुछ बड़े समूहों की अँगरेजी पर निर्भरता इसके कारण माने जा सकते हैं। हालाँकि इलेक्ट्रानिक माध्यमों और सामाजिक मीडिया ने इस धारणा में सेंध मारी है। हिंदी चैनलों का कारोबार कुछ मामलों में दिल्ली से अधिक है। अजीब परंतु ध्यान देने वाली बात यह है कि पश्चिम भारत का वंचित वर्ग हिंदी को अभिव्यक्ति का माध्यम बना रहा है जबकि समृद्धि और सत्ता की सीढ़ी चढ़ने की चाह में हिंदी मातृभाषा वाला समुदाय अँगरेजी पर निर्भर हो रहा है। अनेक दलित लेखक सीधे हिंदी में लिखते हैं और हिंदी अखबार हिंग्लिश में। यह भी बदलाव है।

(*Email - prakashdube@gmail.com*)

भारत में प्रेस की आजादी सिकुड़ रही है

■ राकेश दुबे

भारत की गिनती प्रेस की आजादी के मामले में कोई अच्छे स्थान पर नहीं है। 'द हूट' द्वारा भारतीय मीडिया की स्वतंत्रता पर जारी रिपोर्ट में भारतीय प्रेस की आजादी के सिकुड़ते जाने का जिक्र किया गया है। पिछले 16 महीनों में पत्रकारों पर हमले की 54 घटनाएँ सामने आ चुकी हैं और रिपोर्ट में इसकी वास्तविक संख्या के अधिक होने की भी आशंका जताई गई है।

रिपोर्ट में कहा गया है कि मीडिया स्वतंत्रता के मामले में एक खास तरह का पैटर्न देखने को मिलता है। रिपोर्ट के अनुसार, ''खोजपरक रिपोर्टिंग लगातार खतरनाक होती जा रही है। किसी भी खबर की पड़ताल के लिए मैदान में निकलने वाले पत्रकारों को हमले का सामना करना पड़ता है। भले ही वह पत्रकार बालू माफिया, अवैध निर्माण, पुलिस बर्बरता, डाक्टरों की लापरवाही, चुनाव अभियानों या प्रशासनिक भ्रष्टाचार की खोजपरक रिपोर्ट लेने क्यों न निकला हो।'' अगर पत्रकारों पर हुए हमले की घटनाओं का विश्लेषण किया जाए तो इसके लिए जिम्मेदार लोगों में कानून-निर्माताओं के अलावा कानून लागू करने वाले विभागों से जुड़े लोग भी शामिल हैं। पुलिस, किसी दंगे का आरोपी, शराब माफिया, राजनीतिक दल और उनके नेता एवं समर्थक इन हमलों में शामिल पाए गए हैं। इसके अलावा खबरों को सेंसर करने की घटनाएँ भी बढ़ी हैं। आउटलुक पत्रिका के खिलाफ आपराधिक मामला दर्ज करना, साक्षी टीवी का प्रसारण रोकना या उद्योगपति एवं सांसद राजीव चंद्रशेखर का द वायर

को अपमानजनक नोटिस भेजना ऐसे ही कुछ उदाहरण हैं।

वैसे भारत को हाल ही में प्रेस स्वतंत्रता सूचकांक के मामले में 136 वें स्थान पर रखा गया है। पेरिस स्थित गैरसरकारी संगठन 'रिपोर्टर्स विदाउट बार्डर्स' ने दुनिया के 180 देशों का अध्ययन कर यह रिपोर्ट तैयार की है। इस सूची में भारत को नाइजीरिया, कोलंबिया और नेपाल जैसे देशों से भी नीचे रखा गया है जबकि जनसंख्या और अर्थव्यवस्था के लिहाज से भारत इनसे काफी आगे है। इसके विपरीत देश में समाचारपत्रों और पत्रिकाओं की बिक्री 2006-16 की अवधि में 4.87 फीसदी की दर से बढ़ी है। इन 10 वर्षों में हिंदी के समाचारपत्रों और पत्रिकाओं की विकास दर 8.76 फीसदी रही है जबकि तेलुगू प्रकाशन 8.28 फीसदी की दर से बढ़े हैं। भुगतान से खरीदे जाने वाले समाचारपत्रों के प्रसार में वर्ष 2015 में 12 फीसदी की वृद्धि हुई है। जबकि विकसित देशों में ऐसे समाचारपत्रों का प्रसार दो से लेकर छह फीसदी दर से ही बढ़ा है। इस तरह दुनिया में इंटरनेट के सर्वाधिक तेज प्रसार वाला देश होने के बावजूद पैसे देकर अखबार खरीदे जाने के मामले में भारत ने अन्य देशों को पीछे छोड़ दिया है। मीडिया संस्थान बढ़े, आजादी घटी और हमले बढ़े।

(Email - rakeshdubeyrsa@gmail.com)

डाटाबेस : मध्यप्रदेश के पत्रकारों/जनसंपर्क अधिकारियों/मीडिया शिक्षकों की विवरणी

01. नाम : .....

02. जन्मतिथि : .....

03. जन्मस्थान : ..... जिला ..... प्रदेश .....

04. पिता : .....

05. माँ : .....

06. पत्नी : .....

07. संतान : .....

.....

08. भाई-बहन : .....

.....

09. शिक्षा : .....

विशेष योग्यता : .....

10. ब्लड ग्रुप : .....

11. वर्तमान पता : मकान नं. ..... मुहल्ला .....

नगर ..... जिला .....

प्रदेश ..... पिनकोड .....

12. स्थायी पता : मकान नं. ..... मुहल्ला .....

नगर ..... जिला .....

प्रदेश ..... पिनकोड .....

13. टेलीफोन नं. : एसटीडी कोड ..... फोन .....

14. मोबाइल नं. : .....

15. ईमेल : .....

16. ट्विटर हैण्डल : .....

17. फेसबुक अकाउण्टः .....

18. ब्लॉग : .....

19. वर्तमान संस्थान : .....

20. पद/दायित्व : .....

.....

21. पूर्व अनुभव : .....

.....

22. प्रकाशित पुस्तकें: .....

.....

23. शोध : .....

.....

24. पुरस्कार/सम्मान: .....

.....

25. रुचियाँ : .....

26. अन्य : .....

.....

अनुरोध

(1) कार्यरत और अवकाश प्राप्त सभी पत्रकारों/जनसंपर्क अधिकारियों/मीडिया शिक्षकों को यह विवरणी भरकर भेजना है।

(2) इन सूचनाओं से फोन वार्ता और मेल-मुलाकात का सिलसिला बढ़ेगा।

(3) आपस में भाईचारा बढ़ेगा, सुख-दुःख में साथ निभाने का जज्बा जगेगा। वक्त-जरूरत एक-दूसरे के काम आएँगे।

(4) स्थानीय स्तर पर साल में कम से कम एक बार स्नेह-मिलन/टिफिन पिकनिक, बच्चों और बड़ों की खेल प्रतियोगिताएँ आदि कार्यक्रमों का सिलसिला चलाना है।

(5) सामाजिक सरोकारों की भूमिका बनेगी।

हमारा पता है

विजयदत्त श्रीधर (संस्थापक-संयोजक)
माधवराव सप्रे स्मृति समाचारपत्र संग्रहालय एवं शोध संस्थान
माधवराव सप्रे मार्ग, मेन रोड नं. 3, भोपाल (म.प्र.)-462 003
फोन - 0755-2763406, मो. 09425011467
ईमेल - sapresangrahalaya@yahoo.com

राकेश दुबे
डाटाबेस समन्वयक
मो. 09425022703
ईमेल - rakeshdubeyrsa@gmail.com

युवा पत्रकारों के लिए सप्रे संग्रहालय की पहल

आचार्य महावीरप्रसाद द्विवेदी और गंगाप्रसाद ठाकुर पत्रकारिता फैलोशिप

माधवराव सप्रे स्मृति समाचारपत्र संग्रहालय एवं शोध संस्थान, भोपाल युवा पत्रकारों के लिए पत्रकारिता की दो फैलोशिप आरंभ कर रहा है। एक फैलोशिप मूर्धन्य संपादक आचार्य महावीरप्रसाद द्विवेदी तथा दूसरी फैलोशिप प्रखर पत्रकार श्री गंगाप्रसाद ठाकुर के नाम पर होगी। दोनों फैलोशिप 25 से 40 वर्ष के युवा पत्रकारों के लिए हैं। पाँच वर्ष का कार्य-अनुभव आवश्यक है। न्यूनतम योग्यता स्नातक है। समाचारपत्र, पत्रिका, रेडियो, टेलीविजन, समाचार चैनल, वेब मीडिया के पत्रकार आवेदन कर सकते हैं। फैलोशिप राशि ₹ 50,000/- (पचास हजार रुपये) है। कार्य पूरा करने की समय सीमा निर्धारित है। दलगत राजनीति और धर्म फैलोशिप के विषय नहीं हैं।

युवा पत्रकारों को सामाजिक सरोकारों की पत्रकारिता के लिए प्रेरित और प्रवृत्त करना फैलोशिप का उद्देश्य है। दूसरा प्रमुख मंतव्य युवा पत्रकारों में लोक हित के मुद्दों का गहन अध्ययन, तथ्य-संग्रह और विश्लेषण की दक्षता बढ़ाना है। साथ ही बोधगम्य भाषा में सुरुचिपूर्ण लेखन का हुनर विकसित करना है।

अनुभवी विद्वानों का पैनल फैलोशिप की समूची प्रक्रिया का नियमन और संचालन करेगा। इस पैनल के प्रमुख इण्डियन एक्सप्रेस के पूर्व संपादक श्री चंद्रकान्त नायडू हैं।

मध्यप्रदेश के पत्रकारों, जनसंपर्क अधिकारियों और मीडिया शिक्षकों का डाटाबेस

सप्रे संग्रहालय ने मध्यप्रदेश के पत्रकारों, जनसंपर्क अधिकारियों और मीडिया शिक्षकों का डाटाबेस तैयार करने का निर्णय लिया है। इसमें नाम और पारिवारिक विवरणों के साथ-साथ कार्य अनुभव, प्रकाशन, पुरस्कार आदि जानकारियाँ दर्ज की जाएँगी। ब्लड ग्रुप भी लिखा जाएगा। उद्देश्य यह कि पत्रकारों के बीच छीज रहे संबंधों में पुनः आत्मीयता का संचार हो। मिलना-जुलना-बोलना- बतियाना बढ़े। भाईचारा बढ़े। सुख-दुःख में साथ देने और निभाने की भावना पुष्ट हो। डाटाबेस इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए सतत संवाद का मंच बनेगा। यह दायित्व वरिष्ठ पत्रकार श्री राकेश दुबे को सौंपा गया है।

लोक संवाद

सप्रे संग्रहालय ने गौरव मेमोरियल फाउण्डेशन के सहयोग से सम-सामयिक प्रसंगों और सामाजिक सरोकारों के ज्वलंत मुद्दों पर विमर्श के लिए 'लोक संवाद' का सिलसिला शुरू किया है। यह दायित्व श्री कमलेश पारे ने सँभाला है। हर महीने के दूसरे शनिवार को सुबह 10.30 बजे से दोपहर 12 बजे तक का समय 'लोक संवाद' के लिए निर्धारित है।

डा. राकेश पाठक अध्यक्ष, श्री राकेश दीक्षित उपाध्यक्ष

वर्ष 2017-18 के लिए डा. राकेश पाठक, ग्वालियर और श्री राकेश दीक्षित, भोपाल को सप्रे संग्रहालय संचालक मंडल का अध्यक्ष और उपाध्यक्ष चुना गया है। ❑❑

यायावर पत्रकार श्री विजय मनोहर तिवारी को 'माधवराव सप्रे पुरस्कार'

कला समीक्षक श्री विनय उपाध्याय को 'महेश सृजन सम्मान'

सप्रे संग्रहालय में हिन्दी पत्रकारिता दिवस पर राष्ट्रीय पत्रकारिता सम्मान

आज का पत्रकार सिर्फ सनसनी या चौंकाने वाली हेडलाइंस की तलाश में ही रहता है। जबकि पत्रकारिता में सकारात्मकता के लिए भी जगह होनी चाहिए। इस आशय के विचार 30 मई को माधवराव सप्रे स्मृति समाचारपत्र संग्रहालय एवं शोध संस्थान के सभागार में प्रकट किए गए। मौका था हिन्दी पत्रकारिता दिवस पर आयोजित राष्ट्रीय पत्रकारिता पुरस्कार समारोह का। कार्यक्रम में जनसंपर्क मंत्री डा. नरोत्तम मिश्र बतौर मुख्य अतिथि मौजूद थे। अध्यक्षता सुधी साहित्यकार एवं मध्यप्रदेश के प्रधान आयकर आयुक्त डा. राकेश कुमार पालीवाल कर रहे थे। कार्यक्रम में यायावर पत्रकार विजय मनोहर तिवारी को 'माधवराव सप्रे पुरस्कार' तथा सुप्रसिद्ध कला समीक्षक विनय उपाध्याय को 'महेश सृजन सम्मान' से अलंकृत किया गया।

सप्रे संग्रहालय में यशस्वी पत्रकार श्री यशवंत अरगरे पर केंद्रित किताब का विमोचन

इस अवसर पर मुख्य अतिथि जनसंपर्क मंत्री डा. नरोत्तम मिश्र ने कहा कि तमाम गतिरोध, अवरोध के बाद भी पत्रकारिता अपने दायित्व को निभा रही है। इन युवा पत्रकारों का सम्मान इस बात का परिचायक है। उन्होंने सप्रे संग्रहालय द्वारा बौद्धिक धरोहर के संग्रहण तथा पत्रकारिता के क्षेत्र में किए जा रहे कार्यों की सराहना की। कार्यक्रम की अध्यक्षता कर रहे साहित्यकार एवं प्रधान आयकर निदेशक डा. राकेश पालीवाल ने कहा कि आज का पत्रकार सनसनी फैलाने वाली खबरों की तरफ भाग रहा है। लेकिन अखबारों में सकारात्मक समाचारों के लिए भी जगह होनी चाहिए। उन्होंने कहा कि आज भले ही समाज के हर क्षेत्र में गिरावट हो रही हो, लेकिन कुछ क्षेत्र जैसे - चिकित्सा, शिक्षा और पत्रकारिता से समाज आदर्शों की अपेक्षा रखता है। नई पीढ़ी के पत्रकार इस बात को ध्यान में रखें। डा. पालीवाल ने कहा कि पत्रकारिता को जिस तरह लोकतंत्र का चौथा स्तंभ माना जाता है, उसी तरह वह समाज सेवा का स्तंभ भी बने।

अपने सम्मान के प्रति उत्तर में श्री विजय मनोहर तिवारी ने अपनी यायावरी पत्रकारिता के संस्मरणों को साझा करते हुए कहा कि किसी नकारात्मक खबर को भी पाठक सकारात्मक पहल का आधार बना सकता है। इस क्रम में उन्होंने महाराष्ट्र की एक ग्राम पंचायत के सरपंच द्वारा किए गए प्रयासों का विशेष उल्लेख किया।

इसी कड़ी में सांस्कृतिक पत्रकार विनय उपाध्याय का कहना था कि हिन्दी पत्रकारिता का उद्‌भव ही सांस्कृतिक पत्रकारिता से है। उन्होंने समाचार पत्रों में सांस्कृतिक खबरों को पर्याप्त महत्व दिलाने के अपने प्रयासों का उल्लेख भी किया। साथ ही मीडिया में आज इन खबरों को उतना स्थान नहीं दिए जाने की प्रवृत्ति पर भी चिंता जताई। इसके पूर्व लब्ध प्रतिष्ठित पत्रकार यशवंत अरगरे पर केन्द्रित पुस्तक का विमोचन किया गया। इस पुस्तक का संपादन वरिष्ठ पत्रकार चंद्रहास शुक्ल ने किया है।

आरंभ में सप्रे संग्रहालय के संस्थापक-संयोजक विजयदत्त श्रीधर ने संग्रहालय की आगामी गतिविधियों का ब्यौरा देते हुए बताया कि संग्रहालय आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी और गंगाप्रसाद ठाकुर के नाम पर युवा पत्रकारों को दो फैलोशिप देने जा रहा है। इसके साथ ही प्रदेश के पत्रकारों, जनसपंर्क कर्मियों तथा मीडिया शिक्षकों का डाटाबेस भी तैयार करने जा रहा है। पत्रकारों के बीच आपसी रिश्तों की मजबूती के लिए भी विभिन्न प्रयास किए जाएँगे। सम्मानित विभूतियों का प्रशस्ति वाचन संग्रहालय की निदेशक डा. मंगला अनुजा ने किया। संचालन संग्रहालय के अध्यक्ष राकेश पाठक ने किया तथा आभार उपाध्यक्ष राकेश दीक्षित ने माना। इस अवसर पर बड़ी संख्या में शहर के प्रबुद्धजन मौजूद थे।

■ **दीपक पगारे**

समारोह में सम्मानित पत्रकार-रचनाकार और समाजसेवी

आचार्य महावीरप्रसाद द्विवेदी के अवदान का कृतज्ञ स्मरण

''प्रेमचंद मूल रूप से उर्दू के लेखक थे। उन्हें हिंदी के संस्कार सिखाने वाले आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी ही थे। हिंदी भाषा को मानक रूप देने में आचार्य द्विवेदी का महत्वपूर्ण योगदान रहा। उन्होंने ही प्रेमचंद के बलिदान और पंच परमेश्वर का संशोधन किया था। आचार्य द्विवेदी ने एक-एक पंक्ति में बारह से चौदह तक संशोधन किए। कई वाक्यों में क्रिया समेत पूरा विशेषण ही बदल दिया। कहा जा सकता है कि आचार्य द्विवेदी ने उर्दू से हिन्दी में आ रहे लेखक प्रेमचंद को हिन्दी के संस्कार देने में बहुत बड़ा योगदान दिया। लेकिन आज का हिन्दी समाज अपने मूर्धन्य लेखकों के प्रति उदासीन है, जो बेहद दुखद स्थिति है। हिन्दी के विकास का दावा करने वाले और लाखों रुपये का वेतन लेने वाले तमाम प्रोफेसर स्वयं पढ़ते लिखते नहीं हैं।'' यह विचार थे केंद्रीय हिन्दी संस्थान के उपाध्यक्ष डा. कमल किशोर गोयनका के जो आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी की 153वीं जयंती के उपलक्ष्य में दिल्ली के गांधी शांति प्रतिष्ठान में 20 मई को आयोजित सम्मान समारोह में मुख्य अतिथि के रूप में बोल रहे थे। राइटर्स एंड जर्नलिस्ट एसोसिएशन (वाजा) दिल्ली और आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी राष्ट्रीय स्मारक समिति, रायबरेली के संयुक्त तत्वावधान में आयोजित इस समारोह की अध्यक्षता प्रख्यात लेखक दिनेश कुमार शुक्ल ने की, जबकि जाने माने लेखक प्रेमपाल शर्मा विशिष्ट अतिथि थे।

समारोह का प्रारंभ आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी राष्ट्रीय स्मारक समिति के संयोजक गौरव अवस्थी द्वारा संस्था और आयोजन की विस्तृत रूपरेखा प्रस्तुति से हुआ। वहीं प्रेमपाल शर्मा ने कहा कि आज देश में अपनी भाषा, अपने साहित्य को नयी पीढ़ी तक पहुँचाने के लिए सुगठित पुस्तकालय आन्दोलन की आवश्यकता है। मुख्य अतिथि श्री गोयनका ने कहा कि प्रेमचंद के निर्माण में आचार्य महावीरप्रसाद द्विवेदी का बहुत

बड़ा योगदान था। प्रेमचंद ने उन पर दो संस्मरण भी लिखे हैं। प्रेमचंद ने पंचों में ईश्वर शीर्षक के साथ जो कहानी आचार्य द्विवेदी को प्रकाशित करने भेजी थी, वह पंच परमेश्वर नाम से छपी। द्विवेदी जी ने नाम बदलकर कहानी में जो चमक पैदा की वो अद्भुत था।

भोपाल से पधारे प्रख्यात पत्रकार (पद्मश्री विभूषित) विजयदत्त श्रीधर ने मौजूदा दौर में पत्रकारिता की दुर्दशा के लिए कुछ हद तक पाठकों को भी जिम्मेदार बताया। उनका कहना था कि बाजार हर दौर में समाज का हिस्सा रहा है, लेकिन बाजार को सहायक या सेवक रहना चाहिए, न कि स्वामी। उन्होंने कहा कि पाठक को अपनी भूमिका निभाते हुए घटिया सामग्री को अस्वीकार करना शुरू करना होगा, तभी समाचार पत्रों की सामग्री, भाषा आदि का परिष्कार संभव है।

कार्यक्रम में 'आचार्य महावीरप्रसाद द्विवेदी स्मृति राष्ट्रीय पुरस्कार' से सप्रे संग्रहालय, भोपाल के संस्थापक श्री विजयदत्त श्रीधर को सम्मानित किया गया। उनके द्वारा स्थापित और संचालित सप्रे संग्रहालय विश्व का अपने तरीके का अनूठा प्रयोग है। वहीं मामा बालेश्वर दयाल स्मृति पुरस्कार से सम्मानित हापुड़ के सामाजिक कार्यकर्ता कर्मवीर लम्बे समय से किसानों और जमीनी मुद्दों पर संघर्षरत हैं। अनुपम मिश्र स्मृति पर्यावरण पुरस्कार पाने वाले दिल्ली के वरिष्ठ स्तंभकार पंकज चतुर्वेदी बीते तीन दशकों से जल, विशेष तौर पर पारंपरिक तालाबों के लिए काम कर रहे हैं और उनके प्रयासों से उत्तरप्रदेश में तालाब विकास प्राधिकरण का गठन होने जा रहा है। अरविंद घोष स्मृति पुरस्कार से सम्मानित दैनिक जागरण के विशेष संवाददाता संजय सिंह करीब ढाई दशकों से सामाजिक सरोकारों के साथ परिवहन क्षेत्र पर बेहतरीन काम के लिए जाने जाते हैं। आज पटरियों पर दौड़ रही 'गरीब रथ' ट्रेन के चलने में भी उनका योगदान रहा है। वहीं सामाजिक सरोकारों के साथ तेजाब पीड़ित लड़कियों के लिए सतत लेखन करने वाली सुश्री प्रतिभा ज्योति को कंचना स्मृति पुरस्कार से सम्मानित किया गया। वहीं हिन्दी और अँगरेजी दोनों पत्रकारिता में अपने सकारात्मक रुख और निष्पक्ष नजरिए के लिए विवेक शुक्ल को देवेन्द्र उपाध्याय स्मृति सम्मान प्रदान किया गया। रमई काका सम्मान अवधी के प्रख्यात कवि आचार्य सूर्यप्रकाश शर्मा 'निशिहर' को दिया गया। अध्यक्षीय आसंदी से श्री दिनेश कुमार शुक्ल ने कहा कि आचार्य जी केवल हिन्दी ही नहीं, भारतीय साहित्य के मार्गदर्शक थे और उस दौर के कई लेखकों को उनका मार्गदर्शन मिला।

भावी योजना पर प्रकाश डालने के साथ समारोह का संचालन राइटर्स एंड जर्नलिस्ट एसोसिएशन दिल्ली के अध्यक्ष अरविन्द कुमार सिंह ने किया। धन्यवाद ज्ञापन वाजा के महासचिव शिवेंद्र प्रकाश द्विवेदी ने किया।

समारोह में वरिष्ठ पत्रकार अवधेश कुमार, सदानंद पांडेय, गोपाल गोयल, टिल्लन रिछारिया, अरुण तिवारी, राकेश पांडेय, अरविंद विद्रोही, फजल इमाम मलिक, नलिन चौहान, एसएस डोगरा, चित्रा फुलोरिया, सविता आनंद, अलका सिंह, देवेंद्र सिंह राजपूत, जाने माने किसान नेता नरेश सिरोही, विख्यात कृषि वैज्ञानिक प्रो. एन.के. सिंह और विभिन्न क्षेत्रों के जाने माने लोग मौजूद थे। समारोह में रायबरेली से भी विभिन्न क्षेत्रों के लोग पहुँचे थे। ❑❑

श्री सुरेश खरे की स्मृतियाँ सप्रे संग्रहालय में

सुश्री इंदिरा खरे ने अपने बड़े भाई श्री सुरेश चन्द्र खरे, जो दिल्ली में पत्रकार थे, का टाइपराइटर, कैमरा, रिकॉर्डर, केलकुलेटर और मोबाइल सप्रे संग्रहालय के 'नितिन मेहता इलेक्ट्रॉनिक मीडिया कक्ष' के लिए भेंट किया है।

सप्रे संग्रहालय में लोक संवाद

संसदीय सदनों का बहुमत ही लोकतंत्र की कमजोर नस है

भारतीय लोकतंत्र की कितनी बड़ी त्रासदी है कि विधान सदनों के बहुमत को जनता का मत समझ लिया जाता है, और कार्यपालिका के मत को बहुमत समझ लिया जाता है। इस तरह बहुमत ही, लोक कल्याण के सपने को मूर्त रूप देने हेतु बने संसदीय लोकतंत्र की सबसे कमजोर नस बन जाता है। यह बात 13 मई को संसदीय नियमों और प्रक्रियाओं के विशेषज्ञ अशोक चतुर्वेदी ने माधवराव सप्रे संग्रहालय के उपक्रम 'लोकसंवाद' में कही। सामाजिक सरोकारों पर चर्चा और हस्तक्षेप के उद्देश्य से संग्रहालय में आयोजित इस लोक संवाद में विभिन्न क्षेत्रों के सक्रिय विशेषज्ञ नियमित रूप से भाग लेते हैं।

छत्तीसगढ़ में मुख्यमंत्री के संसदीय सलाहकार और मध्यप्रदेश विधानसभा के पूर्व सचिव अशोक चतुर्वेदी ने कहा कि विधायन और नियमन को जिस गंभीरता या जनकल्याण के व्यापक उद्देश्य से होना चाहिए, शायद हम कर नहीं पा रहे हैं। यह स्थिति कमोबेश सभी राज्यों और केंद्र में एक जैसी है। अपने ही प्रदेश का उदाहरण देते हुए उन्होंने कहा कि मध्यप्रदेश में पहले पच्चीस वर्षों में ही सात सौ से अधिक कानून पारित हो चुके थे। शायद अब, अभी तक यह संख्या दो हजार के ऊपर होनी चाहिए। अपने अनुभवों और अन्य विशेषज्ञों के हवाले से उन्होंने कहा कि इसका दुखद पहलू यह है कि विधान बनते समय कोई निश्चित दृष्टि नहीं होती, कोई योजना नहीं होती, इसलिए विभिन्न तरह के निहित स्वार्थ लाभ उठा लेते हैं, साथ ही वे कानून राजनीतिक असहमति या अहंकार की बलि चढ़ जाते हैं। चूँकि इन कानूनों से न्याय परिदान न्यायालयों को करना है, और वहाँ इनके गुणवत्ता विहीन होने से दुविधा बनती है, इसलिए सामान्यजन को न्याय भी देर से और सम्पूर्ण नहीं मिल पाता है। हम इसके लिए जबरन ही न्यायपालिका को दोष देते हैं।

श्री चतुर्वेदी ने कहा कि इससे बड़ी त्रासदी और क्या हो सकती है कि हमारे विधायी सदनों में कुल कामकाज का मात्र दस प्रतिशत ही काम विधान निर्माण हेतु होता है। कई विधान तो किसी व्यक्ति या समूह की इच्छा पर कुछ घंटों में ही बन जाते हैं। उन्होंने यह भी कहा कि जल्दबाजी में पारित कुछ विधेयक तो बीस बीस सालों तक अंतिम स्वीकृति के लिए लंबित रहते हैं। इससे उपजी अराजकता और अव्यवस्था से निपटने के लिए हमें विधि आयोगों की समय समय पर दी गई सलाहों पर विचार करना होगा। इसी तरह संविधान समीक्षा आयोग, जो श्री अटलबिहारी वाजपेयी की सरकार के समय गठित हुआ था, उसके प्रतिवेदनों को क्रियान्वित करना होगा। क्योंकि अब हमें अपने नियमों कानूनों और प्रक्रियाओं की समीक्षा करना बहुत जरूरी है।

चर्चा में भाग लेते हुए पूर्व पुलिस अधिकारी और छत्तीसगढ़ के पूर्व गृह सचिव डा. सुभाष अत्रे ने कहा कि विधिक अव्यवस्था से मैदानी अमले में अत्यधिक दुविधा रहती है। वरिष्ठ पत्रकार और सप्रे संग्रहालय के संस्थापक-संयोजक विजयदत्त श्रीधर ने कहा कि संसदीय सदन, उनकी कार्यवाही और उनमें काम कर रहे जनप्रतिनिधियों के व्यवहार से सामान्यजन में बड़ी निराशा है। श्री श्रीधर ने यह भी कहा कि इस चर्चा को व्यापक स्वरूप देकर, एक सार्थक हस्तक्षेप तैयार किया जाना बहुत जरूरी है। सप्रे संग्रहालय इसमें अपना सामाजिक उत्तरदायित्व जरूर निभाएगा। 'लोक संवाद' का संयोजन-संचालन श्री कमलेश पारे ने किया। ❑❑

नई पीढ़ी ने देखा पुराने जमाने का लालटेन

सप्रे संग्रहालय में 'मेरा दुर्लभ संग्रह' प्रदर्शनी संपन्न

कभी शाम ढलते ही लालटेन लोगों के घरों की रौनक हुआ करती थी। लालटेन से झरती पीली रोशनी घर, दहलान से लेकर पूरे गाँव को रोशन करती थी। आज बिजली की चकाचौंध के आगे यह लालटेन सिर्फ याद बनकर रह गई है। गुजरे जमाने की ऐसी कई चीजों की झलक सँजोए एक प्रदर्शनी 18 मई को माधवराव सप्रे संग्रहालय की दीर्घा में 'मेरा दुर्लभ संग्रह' शीर्षक से सजी। विश्व संग्रहालय दिवस के निमित्त लगी इस प्रदर्शनी में शहर के करीब 25 संग्राहकों ने अपने निजी संग्रह की चीजों को प्रदर्शित किया गया। इनमें पुराने सिक्के, की रिंग्स, प्रस्तर औजार, डाक टिकिट, पुराने बरतन, माचिसें, पुरानी सामग्रियों से तैयार कला आदि शामिल थीं।

सप्रे संग्रहालय में विश्व संग्रहालय दिवस पर प्रदर्शनी का अवलोकन करते हुए श्री शंभुदयाल गुरु

प्रदर्शनी का औपचारिक शुभारंभ अनूठी वस्तुओं के संग्राहक पूर्व डीजीपी सुभाष अत्रे, पुरातत्वविद डा. नारायण व्यास तथा इतिहासविद श्री शंभुदयाल गुरु की मौजूदगी में हुआ। प्रदर्शनी के बारे में संग्रहालय के संस्थापक-संयोजक विजयदत्त श्रीधर ने बताया कि शहर में बहुत से लोगों ने अपने व्यक्तिगत शौक के चलते कई दुर्लभ वस्तुएँ एकत्रित की हैं। इनमें से ज्यादातर संग्रह लिमका बुक आफ रिकार्ड्स या अन्यत्र दर्ज हैं। इनका यह बहुमूल्य कलेक्शन ज्यादा से ज्यादा लोगों की नजरों से गुजरे इस मंशा से यहाँ प्रदर्शित किया गया है।

प्रदर्शनी में खास

प्रदर्शनी में राकेश वैद्य की-रिंग्स का कलेक्शन लेकर आए थे। इसमें विश्व के सभी प्रमुख संग्रहालयों तथा पुराने अखबारों को की-रिंग्स में उभारा गया है। इसी तरह अरुण सक्सेना ने महापुरुषों की याद में निकाले गए सिक्कों को प्रदर्शित किया था। आफताब अहमद ने लालटेन की किस्में और डिजायन प्रदर्शित की थीं। डा. नारायण व्यास ने प्रस्तर, औजार तथा मृद्भाण्ड प्रदर्शित किए। सुधीर पाण्ड्या - देश-विदेश के नोट, सुनील कुमार भट्ट - माचिसें, डी.पी. तिवारी - कवाड़ की कला, अरुण कुमार सक्सेना - सिक्के, आशीष कुमार भण्डारी - डाक टिकिट, आयुषि श्रीवास्तव - शादी कार्ड, मन्नान अहमद - बरतन, टेलीफोन एवं छापे, ब्रजेश गर्ग - विजिटिंग कार्ड, रणजीत कुमार झा - बाँट एवं पोस्ट कार्ड, रवीन्द्र जैन - सिक्के, आतिया सालेह - सिक्के, विजय मोहबे - नाखून, आई.बी. पन्त - सिक्के, आर.जी. ठाकुर - डाक टिकिट, खुर्शीद खान - डाक टिकिट, कीर्ति कुमार जैन - पोस्ट कार्ड, चिन्मय मालवीय - टेग एवं केन, एस. एम. हुसैन - हेट एवं बटन प्रदर्शित किए। दिनभर में करीब सैकड़ों दर्शकों ने प्रदर्शनी का अवलोकन किया। इस अवसर पर दर्शकों तथा संग्राहकों के बीच संवाद भी हुआ। अंत में सप्रे संग्रहालय की ओर से संग्राहकों को प्रमाण-पत्र भी वितरित किए गए।

अतीत से जोड़ते हैं संग्रहालय

कार्यक्रम में विशेष रूप से मौजूद पूर्व डीजीपी सुभाष अत्रे ने कहा कि भले ही आज विश्वभर में संग्रहालय दिवस मनाया जाता हो लेकिन इस तरह के आयोजन हमारी परंपरा का हिस्सा रहे हैं। इस

तरह का संग्रह पहले राजा-महाराजाओं का शौक रहा, लेकिन यह आज ज्यादातर लोगों का शौक हो चला है। उन्होंने सप्रे संग्रहालय की यात्रा का भी जिक्र किया। इतिहासविद शंभुदयाल गुरु ने कहा कि इस तरह के संग्रहालय हमें हमारे इतिहास से जोड़ते हैं। नई पीढ़ी हमारी परंपराओं को इनके जरिए ही समझ सकती है। कार्यक्रम का संचालन सप्रे संग्रहालय की निदेशक डा. मंगला अनुजा ने किया। अंत में केन्द्रीय मंत्री अनिल माधव दवे को दो मिनट का मौन रखकर श्रद्धांजलि दी गई। ❑

'मानवाधिकार, मीडिया और जन सरोकार' का विमोचन

मानवाधिकार का मुद्दा हो या फिर लैंगिक समानता का और जन सरोकार का, पत्रकारिता की जिम्मेदारी बढ़ी है। हमारे समय की माँग है कि हम इन जरूरी मुद्दों पर जागरूक और जिम्मेदार नागरिक तैयार करें। देश को आगे बढ़ाने के लिए हमें अपने पूवार्ग्रह छोड़कर सामाजिक सरोकारों की समझ रखने वाले लोग चाहिए। यह बात बीबीसी, नई दिल्ली के सीनियर ब्राडकास्टर रेहान फजल ने कही। श्री फजल वरिष्ठ पत्रकार एवं इलाहाबाद विश्वविद्यालय के सेण्टर आफ मीडिया स्टडीज के पाठ्यक्रम समन्वयक डा. धनंजय चोपड़ा की साहित्य भंडार से प्रकाशित पुस्तक 'मानवाधिकार, मीडिया और जन सरोकार' के विमोचन अवसर पर विचार व्यक्त कर रहे थे। उन्होंने कहा कि डा. चोपड़ा की पुस्तक हमारे समय के कई सवालों को बड़ी ही शिद्दत के साथ उठाती है और उनके उत्तर भी सुझाती है।

एनडीटीवी, नईदिल्ली के वरिष्ठ सम्पादक एवं प्रख्यात लेखक प्रियदर्शन ने कहा कि हमने पूरी दुनिया को विरासत के रूप में मानवाधिकार, पर्यावरण और सांस्कृतिक बहुलता दिया; लेकिन अब हम इनकी कसौटियों पर खरा उतरने में विफल हो रहे हैं। उन्होंने कहा कि मानवाधिकारों और प्रतिरोध की आवाजें सोशल मीडिया पर तेज हुई हैं, लेकिन इसको हड़पने की कोशिश हो रही हैं। उसे अफवाहों का अड्डा बनाया जा रहा है। यह खतरनाक क्विलन है, जो सोशल मीडिया को अविश्वसनीय बना रहा है। आकाशवाणी, नईदिल्ली की उप निदेशक डा. रितु राजपूत ने कहा कि हमें इस बात का पूरा यकीन है कि मानवाधिकारों की लड़ाई में जिस दिन मीडिया परचम लहरा देगा, उस

दिन हम स्त्री अधिकारों की लड़ाई जीत जाएँगे। उन्होंने कहा कि यह पुस्तक इस लड़ाई को अंजाम तक पहुँचाने का रास्ता सुझाती है।

लेखकीय वक्तव्य में डा. धनंजय चोपड़ा ने कहा कि यह अनायास नहीं है कि आज सरकार को भी कहना पड़ रहा है कि मीडिया के विद्यार्थियों को नक्सलवाद, आतंकवाद और मानवाधिकार के मुद्दों और उससे जुड़े सरोकारों से परिचित कराया जाए। यह पुस्तक इसी दिशा में बढ़ा एक कदम है।

साहित्य भंडार एवं मीरा फाउण्डेशन द्वारा आयोजित विमोचन कार्यक्रम का संचालन युवा पत्रकार अमित राजपूत ने किया। आभार ज्ञापन सचिन मेहरोत्रा ने किया। इस अवसर पर दूरदर्शन के पूर्व महानिदेशक अशोक त्रिपाठी, विज्ञान परिषद के प्रधानमंत्री प्रो. शिवगोपाल मिश्र, हरिमोहन मालवीय, अभिनय श्रीवास्तव, विभोर अग्रवाल, प्रमोद पाण्डेय, यश मालवीय, नंदल हितैषी, सुषमा शर्मा, अतुल यदुवंशी, अनिल रंजन भौमिक, प्रवीण शेखर, शैलेष श्रीवास्तव, रामनरेश पिंडीवासी, प्रो. दिनेश मणि, देवव्रत द्विवेदी, अरिन्दम घोष, लालता प्रसाद, विद्या सागर मिश्र, अमित मौर्य, प्रियंका मिश्रा, के. राशि कुमार, डा. रितु माथुर, जितेन्द्र यादव, उमेश यादव, प्रमोद शर्मा सहित बड़ी संख्या में साहित्यकार और मीडियाकर्मी तथा मीडिया के विद्यार्थी उपस्थित थे। ❑

सामग्रीदाताओं से विनम्र अनुरोध

माधवराव सप्रे स्मृति समाचार पत्र संग्रहालय एवं शोध संस्थान, भोपाल की ख्याति यहाँ उपलब्ध प्रचुर शोध संदर्भ सामग्री के कारण पूरे देश में और विदेशों तक पहुँच चुकी है। देश-विदेश के शोधार्थी, लेखक, पत्रकार, संचारक तथा अन्य बुद्धिजीवी यहाँ वांछित संदर्भ सामग्री पाकर संतोष का अनुभव करते हैं। ग्रन्थों, पत्र-पत्रिकाओं का संग्रह दिनोंदिन बढ़ता जा रहा है।

यहाँ संग्रहीत सामग्री उन उदार मनीषियों और उनके परिजनों से संग्रहालय को प्राप्त हुई है, जो आश्वस्त हैं कि सामग्री यहाँ अध्येताओं की वर्तमान एवं भावी पीढ़ियों के ज्ञान लाभ के लिए एक छत के नीचे संरक्षित है। यही विश्वास हमारी थाती है। हम सभी सामग्रीदाताओं के आभारी हैं।

सामग्रीदाताओं के ध्यानाकर्षण के लिए अनुरोध है कि -

(1) संग्रहालय में उसी सामग्री की उपयोगिता है जो शोध-संदर्भ की दृष्टि से महत्वपूर्ण है।

(2) पाठ्य पुस्तकों एवं प्रश्नोत्तरियों की उपयोगिता नहीं है।

(3) किसी प्रकार की सस्ती मनोरंजन सामग्री अनुपयोगी है।

(4) अभिनंदन ग्रंथ तथा पत्र-पत्रिकाओं के एक ही अंक की एक से अधिक प्रतियाँ उपयोगी नहीं हैं।

(5) गृह पत्रिका तथा स्मारिका आदि की भी उपयोगिता नहीं है।

(6) संग्रहालय को प्रदान की गई सामग्री की वापसी की व्यवस्था नहीं है।

(7) प्राप्त सामग्री का विषयानुसार वर्गीकरण कर सँजोया जाता है।

(8) फोटोकापी की सुविधा नहीं है।

(9) संदर्भ सामग्री बाहर ले जाने की अनुमति नहीं है।

संस्थापक-संयोजक
माधवराव सप्रे स्मृति समाचार पत्र संग्रहालय एवं शोध संस्थान
माधवराव सप्रे मार्ग (मुख्य मार्ग क्र. 3), भोपाल (म.प्र.) - 462 003
टेलीफोन - (0755) 2763406, 4272590

स्वामी, मुद्रक, प्रकाशक विजयदत्त श्रीधर द्वारा दृष्टि आफसेट, भोपाल से मुद्रित तथा माधवराव सप्रे स्मृति समाचार पत्र संग्रहालय एवं शोध संस्थान, भोपाल (म.प्र.) 462 003 से प्रकाशित संपादक – विजयदत्त श्रीधर

सप्रे संग्रहालय का

लोक विज्ञान अनुष्ठान

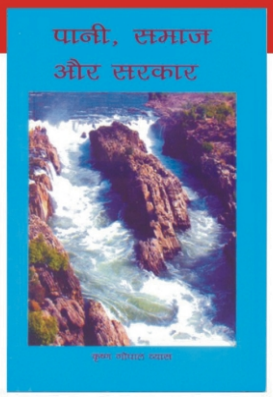

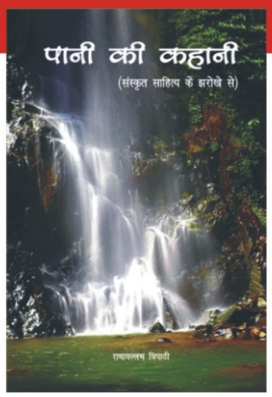

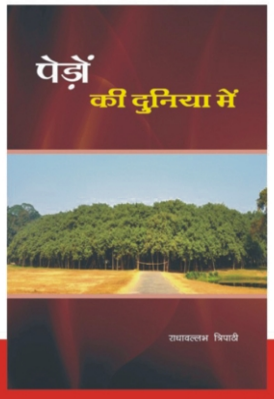

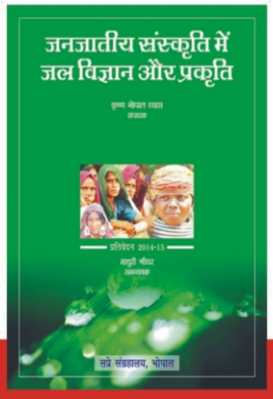

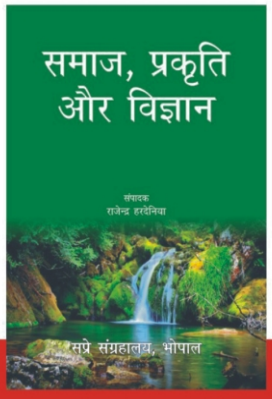

सप्रे संग्रहालय

सा विद्या या विमुक्तये

प्रशासनिक अधिकारी

माधवराव सप्रे स्मृति समाचार पत्र संग्रहालय एवं शोध संस्थान

माधवराव सप्रे मार्ग (मुख्य मार्ग क्र. 3), भोपाल (म.प्र.) - 462 003

दूरभाष - (0755) 2763406, 4272590

Email - sapresangrahalaya@yahoo.com, editor.anchalikpatrakar@gmail.com

Website - www.sapresangrahalaya.com

''संपत्तिशास्त्र-विषयक पुस्तकों की ज़रूरत को पूरा करने - इस अभाव को दूर करने - की, जहाँ तक हम जानते हैं, सबसे पहले पंडित माधवराव सप्रे, बी.ए., ने चेष्टा की। हिंदी में अर्थशास्त्र-संबंधी एक पुस्तक लिखे आपको बहुत दिन हुए। परंतु पुस्तक आपके मन की न होने के कारण उसे प्रकाशित करना आपने उचित नहीं समझा। आपकी राय है कि अर्थशास्त्र-संबंधी पुस्तक ऐसी होनी चाहिए जिसमें इस देश की सांपत्तिक अवस्था का विचार विशेष प्रकार से किया गया हो। यहाँ की स्थिति के अनुसार संपत्तिशास्त्र के सिद्धांतों का प्रयोग करके उनके फलाफल का विचार जिस पुस्तक में न किया जायगा वह, आपकी सम्मति में, यथेष्ठ उपयोगी न होगी। आपका कहना बहुत ठीक है। आपको जब हमने लिखा कि संपत्ति-शास्त्र पर हम एक पुस्तक लिखने का इरादा रखते हैं तब आपने प्रसन्नता प्रकट की और अपनी हस्तलिखित पुस्तक हमें भेज दी। उससे हमने बहुत लाभ उठाया है। एतदर्थ हम आपके बहुत कृतज्ञ हैं।''

- महावीर प्रसाद द्विवेदी

('संपत्तिशास्त्र' पुस्तक की भूमिका, 15 दिसम्बर 1907)

''आज के हिंदी भाषा के युग को पंडित महावीरप्रसाद जी द्विवेदी द्वारा निर्मित तथा तेज को पंडित माधवराव जी सप्रे द्वारा निर्मित कहना चाहिए। यह सेवाएँ सब सज्जनों की हैं किंतु संपादकीय व्यवस्था, विचार, प्रवाह और भाषा शैली के रूप में वर्तमान युग को द्विवेदी जी और सप्रे जी का ही युग कहना होगा।''

- माखनलाल चतुर्वेदी

(भरतपुर संपादक सम्मेलन - 1927 के अध्यक्षीय अभिभाषण का अंश)

''सप्रेजी उन थोड़े-से इने गिने मनुष्यों में हैं, जिन्होंने अपना सुख त्याग कर देश हित के लिए अपना जीवन समर्पण किया है। उन गिने हुए देशसेवकों में हैं, जिन्होंने, मातृभाषा दूसरी होते हुए भी, हिंदी को राष्ट्रभाषा के नाते अपनाया है। ..... उनका *गीता रहस्य* तो बहुतों ने देखा है। वह कितनी ऊँची वस्तु है, प्रायः सब ही पढ़े-लिखे लोग जानते हैं। किंतु जो उनके जीवन-रहस्य से परिचित हैं वे इतना और अधिक जानते हैं कि सप्रेजी का व्यक्तित्व कितने उच्च आदर्श का है। सप्रे जी का संबंध राष्ट्रीयता से प्राचीन है। वह 'केसरी' होकर भारत में गरज चुके हैं। उनकी वाणी से कितने ही शत्रुओं के हृदय दहल चुके हैं। सप्रेजी जैसी महान आत्माओं द्वारा उसी प्रकार 'हिंदी केसरी' फिर गरजेगा और राष्ट्र को आगे बढ़ावेगा।''

- पुरुषोत्तम दास टंडन

(पंचदश हिंदी साहित्य सम्मेलन देहरादून – 1924 में उद्‌गार)

'माधवराव सप्रे रचना-संचयन' का विमोचन

सप्रे जयंती, 19 जून 2017, शाम 5 बजे

साहित्य अकादेमी सभागृह

रवीन्द्र भवन, 35 फीरोजशाह मार्ग, नईदिल्ली - 110001